

टीम वर्क

कैसे करें सामूहिक कार्य
भाषना का विकास



VISIT...

LANZAROTE
Caliente.COM

टीम वर्क

कैसे करें

‘सामूहिक कार्य-भावना’ का विकास?



प्रदीप ठाकुर



प्रभात प्रकाशन

ISO 9001:2015 प्रकाशक

प्रकाशक— **प्रभात प्रकाशन प्रा. लि.**

4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002

E-mail: prabhatbooks@gmail.com

www.prabhatbooks.com

© Prabhat Prakashan

अनुक्रम

अध्याय-1 सामूहिक कार्य का महत्त्व

अध्याय-2 सामूहिक कार्य का प्रभाव

अध्याय-3 सामूहिक कार्य का जादू

अध्याय-4 सपनों का कार्य-समूह

अध्याय-5 सामूहिक कार्य का रहस्य

अध्याय-6 सामूहिक कार्य का रसायन-शास्त्र

अध्याय-1

सामूहिक कार्य का महत्त्व

“एक साथ आना शुरुआत है। एक साथ रहना प्रगति है। एक साथ कार्य करना सफलता है।”

—हेनरी फोर्ड

फोर्ड मोटर कंपनी के संस्थापक हेनरी फोर्ड के शब्दों को ध्यान से पढ़ें। जब वह कहते हैं कि एक साथ आना शुरुआत है, तो इसका क्या अर्थ निकलता है? यही कि बिना एक साथ आए कोई कार्य शुरू ही नहीं हो सकता है। एक साथ आए बिना किसी समाज या संगठन की कल्पना नहीं की जा सकती, लेकिन यदि किसी समाज या संगठन को आगे बढ़ना है तो एक साथ आना ही पर्याप्त नहीं है, इसके लिए एक साथ रहना भी पड़ता है, लेकिन कोई समाज या संगठन तब सफल होता है, जब सभी एक साथ मिलकर कार्य करते हैं।

जी हाँ, अमेरिकी उद्योगपति हेनरी फोर्ड (30 जुलाई, 1863 से 7 अप्रैल, 1947) से पहले किसी ने भी बड़े पैमाने पर कार निर्माण के बारे में सोचा भी नहीं था, लेकिन उसने संयोजन शृंखला (असेंबली लाइन) तकनीक से ‘मॉडल टी’ कार का बड़े पैमाने पर उत्पादन कर मोटरवाहन उद्योग को हमेशा के लिए बदलकर रख दिया। संयोजन शृंखला तकनीक के माध्यम से फोर्ड ने सामूहिक कार्य की अनंत संभावनाओं का जीवंत प्रदर्शन किया था। तभी तो वह दावा करते थे, “अगर हर कोई एक साथ आगे बढ़ रहा है, तो सफलता खुद ही अपना खयाल रखती है।” याद रहे कि फोर्ड को विश्व इतिहास के सबसे अधिक प्रभावशाली उद्यमियों-कारोबारियों की सूची में पहले स्थान पर रखा जाता है।

अकेला सफल होना संभव नहीं

फोर्ड ही क्यों, आप किसी भी सफल व्यक्ति का नाम लीजिए। उसकी सफलता की तह में जाइए, तो आपको साफ क्या पता चलेगा? यही कि उसकी सफलता सिर्फ उसी के काम का नतीजा नहीं है, बल्कि उसके पीछे व्यक्तियों का एक समूह काम कर रहा है। खैर, अब आप बताइए कि आपका नायक (हीरो) कौन है? क्या आपने अभी तक यह नहीं सोचा है कि आपका नायक कौन है? चलिए, अब मैं आपसे दूसरा सवाल पूछता हूँ : आप किन लोगों की सबसे अधिक प्रशंसा करते हैं? आप किसके जैसा बनने का सपना देखते हैं? वे कौन लोग हैं, जो आपको सबसे अधिक उत्साहित, रोमांचित व प्रेरित करते हैं?

क्या आप इन महान् कारोबारियों के प्रशंसक हैं, जिन्होंने भारतीय उद्योग-व्यापार जगत् के परिदृश्य को ही बदलकर रख दिया था—

- जमशेदजी नसरवानजी टाटा (3 मार्च, 1839 से 19 मई, 1904) : अग्रणी उद्योगपति, जिन्होंने भारत के सबसे बड़े ‘टाटा’ उद्योग समूह की स्थापना की।
- घनश्याम दास बिड़ला (10 अप्रैल, 1894 से 11 जून, 1983) : अग्रणी व्यवसायी, जिन्होंने छोटी सी साहूकारी को भारत के दूसरे सबसे विविधतापूर्ण ‘बिड़ला’ उद्योग-व्यापार समूह में बदल दिया।
- आर्देशिर गोदरेज (1868-1936) : अग्रणी व्यापारी, जिन्होंने अपने भाई के साथ आधुनिक ‘गोदरेज’ उद्योग समूह के अग्रदूत ‘गोदरेज ब्रदर्स’ कंपनी की स्थापना की थी।

- गोविंदराम सेकसरिया (19 अक्टूबर, 1888 से 29 जून, 1946) : स्वतंत्रता पूर्व भारत के सबसे सफल व्यापारी, जिन्हें 'विश्व का कपास राजा' माना जाता था।
- वालचंद हीराचंद दोशी (23 नवंबर, 1882 से 8 अप्रैल, 1953) : वालचंद समूह के संस्थापक, जिन्होंने भारत का पहला आधुनिक शिपयार्ड, पहला विमान कारखाना और पहला कार कारखाना स्थापित किया था।
- वर्गीज कुरियन (26 नवंबर, 1921 से 9 सितंबर, 2012) : सामाजिक उद्यमी व भारत में श्वेत क्रांति के जनक, जिन्होंने दुनिया के सबसे बड़े कृषि दुग्धशाला विकास कार्यक्रम 'ऑपरेशन फ्लड' से 1998 में भारत को दुनिया का सबसे बड़ा दूध उत्पादक देश बना दिया।
- धीरजलाल हीराचंद 'धीरूभाई' अंबानी (28 दिसंबर, 1932 से 6 जुलाई, 2002) : सबसे प्रसिद्ध कारोबारी दिग्गज व 'रिलायंस इंडस्ट्रीज' के संस्थापक, जिन्होंने पूँजी बाजार में आम निवेशकों को आकर्षित किया।
क्या आप विश्व इतिहास में सबसे प्रभावशाली माने जानेवाले इन कारोबारियों को पसंद करते हैं—
- जे.पी. मॉर्गन (17 अप्रैल, 1837 से 31 मार्च, 1913) : अमेरिकी वित्तपोषक (फाइनेंसर) व साहूकार (बैंकर), जिसने अपनी सत्यनिष्ठा, अद्भुत प्रबंधन कुशलता व असीमित संसाधनों से जनरल इलेक्ट्रिक, यूनाइटेड स्टेट्स स्टील कॉर्पोरेशन, इंटरनेशनल हार्वेस्टर व एटी ऐंड टी जैसे बड़े औद्योगिक समेकनों (इंडस्ट्रियल कंसोलिडेशन) को संभव कर दिखाया।
- जॉन डेविसन रॉकफेलर सीनियर (8 जुलाई, 1839 से मई 23, 1937) : अमेरिकी तेल उद्योगपति व आधुनिक इतिहास में सबसे अमीर व्यक्ति, जिसने स्टैंडर्ड ऑयल कंपनी के माध्यम से समूचे तेल उद्योग पर एकाधिकार बना लिया था।
- एंड्रयू कार्नेगी (25 नवंबर, 1835 से 11 अगस्त, 1919) : स्कॉटिश अमेरिकी उद्योगपति व कार्नेगी स्टील कंपनी के संस्थापक, जिसने इस्पात उद्योग के भारी विस्तार से अमेरिका को ग्रामीण कृषि-प्रधान देश से औद्योगिक शक्ति में बदलने में सबसे प्रमुख भूमिका निभाई।
- शमूएल मूर 'सैम' वाल्टन (29 मार्च, 1918 से 5 अप्रैल, 1992) : अमेरिकी उद्यमी व वालमार्ट के संस्थापक, जिसने खुदरा कारोबार व खरीदारी अनुभव को हमेशा के लिए बदलकर रख दिया।
- थॉमस वाटसन जूनियर (14 जनवरी, 1914 से 31 दिसंबर, 1993) : अमेरिकी व्यवसायी व आईबीएम के दूसरे अध्यक्ष, जिसने 5 अरब डॉलर में विकसित मेनफ्रेम कंप्यूटर प्रणाली 'आईबीएम सिस्टम/360' से कारोबारी कार्यप्रणाली को हमेशा के लिए बदल दिया था (फिर भी, आम आदमी को 'व्यक्तिगत कंप्यूटर' दे पाने में काफी पीछे रह गया)
- वाल्टर इलियास 'वॉल्ट' डिज्नी (5 दिसंबर, 1901 से 15 दिसंबर, 1966) : अमेरिकी उद्यमी व जीव-संचारित चलचित्र (एनीमेशन फिल्म) उद्योग के अग्रणी, जिसने बाल मनोरंजन के तौर-तरीकों को हमेशा के लिए बदल दिया।
- रेमंड अल्बर्ट 'रे' क्रोक (5 अक्टूबर, 1902 से 14 जनवरी, 1984) : अमेरिकी व्यापारी, जिसने मैकडॉनल्ड्स को विश्व की सबसे सफल त्वरित खाद्य (फास्ट फूड) कंपनी में बदल दिया।
- अल्फ्रेड बर्नहार्ड नोबेल (21 अक्टूबर, 1833 से 10 दिसंबर, 1896) : स्वीडिश रसायनज्ञ, जिसके द्वारा आविष्कार किए गए डायनामाइट ने सुरंगों, रेलमार्गों व नहरों के निर्माण को सुविधाजनक बनाया, तो उससे विकसित अति-विस्फोटक गोले युद्ध-नरसंहार में नाटकीय बढ़त के कारण भी बने।

आप 21वीं सदी के प्रौद्योगिकी महानायकों बिल गेट्स (माइक्रोसॉफ्ट), स्टीव जॉब्स (एप्पल), लैरी पेज व सेर्गेई

ब्रिन (गूगल), जेफ बेजोस (अमेजन.कॉम), मार्क जकरबर्ग (फेसबुक) सहित खेल, संगीत, सिनेमा, विज्ञान, राजनीति आदि क्षेत्रों के दिग्गजों में से भी किसी को अपना नायक चुन सकते हैं, जिनका उल्लेख मैंने नहीं किया है।

जी हाँ, हम लोगों में हर कोई सफलता हासिल करनेवालों का गुणगान करते हैं। हम विशेष रूप से उन पथ-प्रदर्शकों, निर्भीक लोगों को पसंद करते हैं, जो विपरीत परिस्थितियों में भी संघर्ष करते हैं। हमें अच्छा लगता है, जब किसी ग्रामीण क्षेत्र का कोई बालक सेना का बड़ा अधिकारी बन जाता है या फिर ओलंपिक का खिलाड़ी या वैज्ञानिक या राजनेता।

जरा सोचिए, यदि इतालवी खोजी क्रिस्टोफर कोलंबस ने अटलांटिक महासागर के पार जाने के लिए चार भीषण समुद्री अभियानों का नेतृत्व करने की हिम्मत न जुटाई होती तो फिर एशिया व यूरोप के बीच 'नई दुनिया' (पृथ्वी के पश्चिमी गोलार्ध यानी अमेरिका सहित कैरेबियाई व बरमूडा द्वीप-समूहों) का कैसे पता चल पाता? वैसे तो कोलंबस ने स्पेन के कैथोलिक सम्राटों के संरक्षण में यूरोपीय उपनिवेशवाद को फैलाने के लिए वे यात्राएँ की थीं, लेकिन उन साहसिक अभियानों ने ही समूची दुनिया को एक करने का रास्ता साफ किया था। इसी तरह, यदि सोवियत रूस के अंतरिक्ष यात्री यूरी गागरिन ने वोस्तोक अंतरिक्ष यान में बाह्य अंतरिक्ष में पहली बार पृथ्वी की कक्षा पूरी करने की हिम्मत न जुटाई होती तो क्या हम चाँद, मंगल या अन्य ग्रहों पर जाने की सोच भी पाते? लेकिन चाहे कोलंबस हो गागरिन या कोई और सभी की सफलताओं के पीछे बहुत से लोगों का सामूहिक योगदान रहा है।

हम सभी जर्मनी में जनमे सैद्धांतिक भौतिकविज्ञानी अल्बर्ट आइंस्टाइन (14 मार्च, 1879 से 18 अप्रैल, 1955) को जानते हैं। उसने सामान्य सापेक्षता सिद्धांत (जनरल रिलेटिविटी थ्योरी), जिसे 'गुरुत्वाकर्षण का ज्यामितीय सिद्धांत' (जियोमेट्रिक थ्योरी ऑफ ग्रेविटेशन) भी कहा जाता है, का प्रतिपादन किया था। इस सिद्धांत को परिमाण यांत्रिकी (क्वांटम मेकैनिक्स) के साथ-साथ आधुनिक भौतिकी के दो स्तंभों में से एक माना जाता है। आइंस्टाइन के कार्यों ने मनोविज्ञान की प्रमुख शाखा 'विज्ञान का दर्शन' (फिलॉसफी ऑफ साइंस) पर विशेष प्रभाव डाला था, लेकिन उन्हें सबसे अधिक द्रव्यमान ऊर्जा तुल्यता (मास एनर्जी एक्विवलेंस) समीकरण $E = mc^2$ के लिए जाना जाता है। यह दुनिया का सबसे प्रसिद्ध समीकरण कहा जाता है, जो द्रव्यमान व ऊर्जा के बीच के संबंध बताता है।

जी हाँ, अल्बर्ट आइंस्टाइन ने परमाणु बम की क्षमताओं का खुलासा कर अपने जीवनकाल में ही दुनिया को बदलकर रख दिया था और उसका नाम 'उच्च प्रतिभा का पर्याय' बन गया था। वास्तविकता भी यही है कि आइज़ैक न्यूटन के बाद से अब तक किसी अन्य वैज्ञानिक ने आइंस्टाइन से बेहतर काम नहीं किया। यही कारण है कि 1999 में, 'टाइम' पत्रिका ने आइंस्टाइन को 'सदी का व्यक्ति' (पर्सन ऑफ द सेंचुरी) घोषित कर दिया था, लेकिन सबसे बड़ी भ्रामक धारणा यह है कि अल्बर्ट आइंस्टाइन ने इन क्रांतिकारी सिद्धांतों को बिल्कुल एकाकीपन में खोजा था। शुक्र है, आइंस्टाइन ने खुद ही इस भ्रम का खुलासा कर दिया था, "अकसर मैं सोचता हूँ कि मेरे बाहरी व आंतरिक जीवन के निर्माण में मेरे कितने संगी-साथियों, जीवित एवं मृत दोनों की मेहनत का योगदान रहा है; और मैंने जो प्राप्त किया है, उसे वापस लौटाने में मुझे स्वयं कितनी कोशिश करनी होगी।"

20वीं सदी को 'अमेरिका की सदी' माना जाता है, क्योंकि उस दौरान वहाँ ऐसे कई प्रभावशाली राजनेता, नवाचारी उद्यमी व प्रतिभाशाली वैज्ञानिक हुए, जिन्होंने अपने कार्यों से समूची दुनिया को प्रभावित किया। 21वीं सदी में भी अमेरिकी लोग काफी आगे चल रहे हैं। निश्चित रूप से उनमें से सभी व्यक्तिगत स्तर पर बहुत ही प्रतिभाशाली लोग थे और अभी भी हैं, लेकिन थोड़ी तह में जाएँ तो साफ हो जाता है कि यदि उनके पीछे सक्षम कार्यदल (टीम) काम नहीं कर रहा होता तो वे दुनिया को चमत्कृत कर देनेवाली ऊँचाइयों तक नहीं पहुँच पाते। वैसे सच्चाई यह भी है कि पूँजीवादी अमेरिका व्यक्तिवादी अहं को प्रोत्साहित करता हुआ नजर आता है। व्यक्तिगत

यशोगान का शोर इतना ज्यादा है कि आम लोग यही भ्रम पाल लेते हैं कि उनकी उपलब्धियाँ सिर्फ उन्हीं की हैं, लेकिन चाहे वह औद्योगिक क्रांति का दौर रहा हो या फिर कंप्यूटर व अंकीय-क्रांति (डिजिटल रेवोल्यूशन) का, चमकते सितारों के पीछे अनगिनत लोगों का योगदान है।

सामूहिक कार्य जरूरी क्यों है?

हम यह कहावत सुनते आए हैं कि हरेक सफल व्यक्ति के पीछे हमेशा दूसरे योग्य व्यक्ति होते हैं। सच भी यही है कि बड़ी सफलता का वैभवशाली भवन किसी एक व्यक्ति के दम पर खड़ा नहीं होता, बल्कि उसकी मजबूत नींव से लेकर शिखर तक में अनेक का खून-पसीना लगा होता है। अब प्रश्न यह उठता है कि जब 'सामूहिक कार्य' के बिना बड़ी सफलता सुनिश्चित नहीं की जा सकती है, तो फिर हम व्यक्ति-विशेष के सिर पर सफलता का सेहरा क्यों बाँध देते हैं?

थोड़ी सी तह में जाएँ तो पता चलता है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की अमेरिकी पीढ़ी में निरंकुश व्यक्तिगत जीवनशैली को अपनाने व व्यक्तिगत उपलब्धियों का जश्न मनाने की होड़ शुरू हुई थी। इसका नतीजा क्या निकला? जिस सामूहिक कार्यशैली की बदौलत अमेरिका में रचनात्मक पूँजीवाद का विकास हुआ था और उसे अघोषित महाशक्ति बना दिया था, उसका लगातार हास होता चला गया और व्यक्तिवादी कार्यशैली के चलते व्यक्तिगत साँठ-गाँठ पर आधारित 'घनिष्ठ पूँजीवाद' (क्रोनी कैपिटलिज्म) ने पाँव पसारना शुरू कर दिया। इसका नतीजा सबके सामने है—विश्व की अधिकांश संपत्ति पर मुट्ठी भर लोगों का कब्जा होता चला गया और गरीबों की संख्या लगातार बढ़ती चली गई। वैसे तो अमेरिका ने अभी भी बहुत हद तक इस बीमारी के असर को फैलने से रोका हुआ है, लेकिन रूस व भारत जैसे देशों में अमीर-गरीब की खाई लगातार चौड़ी होती गई है।

खैर, असल मुद्दा यह है कि यदि किसी व्यक्ति, समाज या देश को बड़ी सफलता हासिल करनी है तो उसे सामूहिक शैली विकसित करनी पड़ेगी। हमें इस सच्चाई को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि सहयोग-भावना (टीम स्पिरिट) को विकसित किए बिना किसी 'प्रभावी कार्यदल' (इफेक्टिव टीम) का गठन संभव नहीं होगा और जब तक ऐसा नहीं होगा, तब तक सफलता को सुनिश्चित कर पाना भी संभव नहीं हो सकेगा। वैसे मुद्दा यह नहीं है कि 'कार्यदल' (टीम) का अपना कोई महत्व है या नहीं? असल मुद्दा तो यह है कि क्या हम व्यक्तिगत तौर पर इस सच्चाई को स्वीकार करते हैं और स्वयं को सामूहिक खिलाड़ी (टीम प्लेयर) बनाने के लिए तैयार हैं? सच तो यही है कि अकेले-अकेले महान् सफलता हासिल नहीं की जा सकती। अकेले ऐसा कुछ भी नहीं किया जा सकता, जिसकी कोई वास्तविक उपयोगिता हो।

आप मानवजाति के इतिहास पर नजर दौड़ाएँ, आप ऐसा कोई भी काम नहीं खोज पाएँगे, जो किसी अकेले व्यक्ति द्वारा संभव हुआ हो। जी हाँ, आप ऐसा एक भी काम नहीं खोज सकते, क्योंकि कोई ऐसा कार्य है ही नहीं, जिसमें किसी दूसरे ने योगदान न किया हो। यह मानव सभ्यता असंख्य लोगों की मेहनत का सामूहिक नतीजा है। दार्शनिक तथ्य भी यही है कि इस ब्रह्मांड में सबकुछ एक-दूसरे पर निर्भर है, आप अपने आप में कुछ भी नहीं हैं; आपका महत्व तभी तक है, जब आप दूसरों के साथ में हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के 36वें राष्ट्रपति (1963 से 1969) लिंडन बेंस जॉनसन कहा करते थे, "ऐसी कोई समस्या नहीं, जिन्हें हम आपस में मिलकर हल नहीं कर सकते और शायद ही ऐसी कोई समस्या हो, जिसे हम अपने आप हल कर सकें।"

विश्व भर के शिक्षाविदों व कार्यकारियों ने सामूहिक कार्य (टीमवर्क) की जरूरत पर बल दिया है। सामूहिक कार्य के निम्नलिखित लाभ हो सकते हैं—

1. रचनात्मकता व सीखने को बढ़ावा

जब लोग एक टीम पर एक साथ काम करते हैं तो रचनात्मकता पनपती है। एक समूह के रूप में विचारों पर माथापच्ची बासी दृष्टिकोण को रोकता है, जो कि अकसर अकेले काम से बाहर आता है। कार्यदल के प्रत्येक सदस्य के अद्वितीय दृष्टिकोण के मेल से अधिक प्रभावी समाधान निकलता है।

ध्यान रहे कि आपने अपने व्यक्तिगत अनुभवों से जो कुछ भी सीखा है, वह अकसर आपके सहकर्मियों से पूरी तरह से अलग होता है। इस प्रकार, सामूहिक कार्य साझा-ज्ञान को अधिकतम स्तर तक ले जाता है और आपको नए कौशल सीखने में मदद करता है, जिसका उपयोग आप अपने बाकी के पेशेवर जीवन में भी कर सकते हैं।

जब एक परियोजना पर आप एक साथ मिलकर काम करते हैं, तो वह सीखने का उत्साह पैदा करता है, जिसका एकाकी काम में आमतौर पर अभाव होता है। ऐसे में आप अपने कार्यदल के बाकी साथियों के साथ नई खोजों को साझा करने में सक्षम होते हैं। यह कर्मचारियों को तो उत्साहित करता ही है, इससे व्यक्तिगत व सामूहिक ज्ञान को भी बढ़ावा मिलता है।

2. पूरक व अनुपूरक शक्तियों का सम्मिश्रण

एक साथ मिलकर काम करना कर्मचारियों को अपने कार्यदल के साथियों की सामूहिक प्रतिभाओं के व्यापक आधार पर नए निर्माण करने की सुविधा देता है। हो सकता है कि आपकी अपनी ताकत रचनात्मक-सोच (क्रिएटिव थिंकिंग) हो, जबकि आपका सहकर्मी संगठन व योजना बनाने की विशेष क्षमता रखता हो। तो अपनी क्षमताओं को कार्यदल के दूसरे साथियों के साथ साझा करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। कार्यदल का हर सदस्य एक-दूसरे का पूरक (कॉम्प्लीमेंट) व अनुपूरक (सप्लीमेंट) होता है। इस तरह सामूहिक कार्य पूरक व अनुपूरक शक्तियों का सम्मिश्रण बनाता है।

अकसर कार्यदल एक साथ मिलकर अच्छा काम कर पाता है, क्योंकि कार्यदल के सदस्य व्यक्तिगत प्रतिभा को सामने लाने में एक-दूसरे पर भरोसा करते हैं। इन कुशलताओं के विकास की प्रक्रिया का अवलोकन कर आप इन उपहारों का गठबंधन करना और ज्यादा शक्तिशाली कार्यदल का निर्माण करना सीख सकते हैं। जब आप अपने सहकर्मियों को एक ही कार्य में अलग दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए देखते हैं, तो आपको अपने तरीके को समायोजित करने व सुधारने का मौका मिलता है।

3. सामूहिक विश्वास का निर्माण

अन्य लोगों पर निर्भरता सामूहिक विश्वास पैदा करता है और सामूहिक कार्य सहकर्मियों के साथ मजबूत रिश्ते स्थापित करता है। कभी-कभी असहमति के बावजूद, एक प्रभावी कार्यदल एक साथ काम में आनंद महसूस करता है और मजबूत बंधन को साझा करता है। जब आप किसी सहकर्मी पर भरोसा रखते हैं तो आप एक रिश्ते की नींव स्थापित कर रहे होते हैं, जो मामूली संघर्ष सहन कर सकता है।

अपने साथियों पर भरोसा करना सुरक्षा की भावना भी प्रदान करता है, जो विचारों को उभरने की अनुमति देता है। यह कर्मचारियों को आपस में खुलने और एक-दूसरे को प्रोत्साहित करने में मदद करता है। जब आप सामूहिक रूप से काम करते हैं तो खुला-संचार (ओपन कम्युनिकेशन) उसकी कुंजी होता है और विशेष रूप से मुश्किल समूह परियोजनाओं में प्रभावी समाधान पैदा करता है।

आपसी विश्वास के बिना कार्यदल बिखरना शुरू हो जाता है और सौंपी गई परियोजनाओं में सफल नहीं हो सकता। महान् कार्यदल एक-दूसरे को ऊपर की तरफ ठेलता है और एकजुट समूह के गठन के लिए अलग-अलग सदस्यों को मजबूत बनाता है। एक साथ काम करके कर्मचारियों को सीख मिलती है कि जीत व हार कार्यदल के हर किसी सदस्य को प्रभावित करती है। सामूहिक कार्य एक-दूसरे की अलग-अलग क्षमताओं में विश्वास को जरूरी बनाता

है।

4. विवाद समाधान कुशलताओं की शिक्षा

जब आप अद्वितीय लोगों के समूह को एक साथ रखते हैं तो उनके बीच में अनिवार्य रूप से विवाद भी होता ही है। कार्यदल के सदस्य अलग-अलग पृष्ठभूमि से आते हैं और उनकी कार्यशैली व आदतें भी अलग-अलग होती हैं। जब इनके अद्वितीय दृष्टिकोण सबसे सफल कार्य की रचना करते हैं, तो वे नाराजगी भी पैदा कर सकते हैं, जो जल्द ही विवाद में बदल जाता है।

जब सामूहिक कार्य-परिस्थितियों में विवाद उठता है, तो कार्यदल के सदस्य शीर्ष प्रबंधन के सामने जाने की बजाय अपने आप ही विवाद को सुलझाने के लिए बाध्य हो जाते हैं। अपने स्तर पर विवाद समाधान (कनफ्लिक्ट रिजोल्यूशन) एक प्रकार का कौशल (स्किल) है। कार्यदल के सदस्य भविष्य में इस कौशल का उपयोग खुद को कार्यकुशल प्रबंधक (एफिशिएंट मैनेजर) बनाने में कर सकते हैं।

5. व्यापक स्वामित्व भावना को बढ़ावा

सामूहिक परियोजनाएँ कार्यदल के सदस्यों को उनके योगदान पर गर्व महसूस करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। बाधाओं से निपटना व एक साथ मिलकर उल्लेखनीय कार्य की रचना करना, कार्यदल के सदस्यों को परिपूर्णता महसूस कराते हैं। संगठन के लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में कार्यदल के सदस्यों को संगठन से जुड़ा हुआ महसूस करने का मौका देता है। यह अपने संगठन के प्रति निष्ठा को मजबूत बनाता है और कार्यदल के सदस्यों के बीच कार्य-संतुष्टि (जॉब सटिस्फैक्शन) की स्थितियों को ऊँचाइयों की ओर ले जाता है।

सामूहिक कार्य केवल कार्यदल के सदस्यों के लिए ही मददगार नहीं है। यह लंबे समय में नियोक्ता के लिए भी उतना ही लाभप्रद साबित होते हैं। कार्यदल के जो सदस्य अपने कार्यस्थल के साथ जुड़े होते हैं, उनके अपने संगठन के साथ बने रहने की भी ज्यादा संभावना रहती है। जब किसी संगठन या कंपनी के कर्मचारी अपनी नौकरियों को छोड़ते हैं तो अकसर वेतन कम होने का हवाला देते हैं और उनकी दूसरी आम शिकायत यह होती है कि उनका योगदान महत्व का नहीं दिखाई देता। सामूहिक कार्य लोगों को कंपनी के साथ संलग्न होने और बड़ी तसवीर को जोड़ने का मौका देता है।

6. स्वस्थ जोखिम को प्रोत्साहन

किसी परियोजना पर अकेले काम कर रहा कर्मचारी, शायद ही अपनी सीमा से बाहर जाकर कुछ करने की कोशिश करता है। जब अकेले काम करते हुए परियोजना असफल होती है तो उसका खामियाजा सिर्फ उसे उठाना पड़ता है। इसके उलट, भले ही किसी सामूहिक परियोजना की सफलता का पूरा श्रेय आपको न मिले, लेकिन दूसरों के साथ मिलकर किया गया सामूहिक कार्य असफल काम की जिम्मेदारी को भी सभी के बीच फैला देता है।

कार्यदल के रूप में काम करना उसके सदस्यों को ज्यादा जोखिम उठाने का मौका देता है, क्योंकि असफलता की स्थिति में उनके पास सहारा देने के लिए समूचा समूह होता है। इसी तरह, कार्यदल के रूप में सफलता साझा करना संबंध जोड़नेवाला अनुभव प्रदान करता है। एक बार जब कार्यदल एक साथ सफल हो जाता है, तो उनके विचार-मंथन सत्र बिना किसी हिचकिचाहट के क्रांतिकारी विचार पैदा करने लग जाते हैं। कई मामलों में, सबसे जोखिमपूर्ण, सबसे अच्छा विचार साबित हो सकता है। सामूहिक कार्य सदस्यों को लीक से हटकर सोचने की स्वतंत्रता की भी अनुमति देता है।

भले ही कार्यदल में कोई 'मैं' न हो, लेकिन फिर भी सामूहिक कार्य सदस्यों को व्यक्तिगत स्तर पर लाभ दे सकता

है। प्रतिस्पर्धी स्वभावों को व्यक्तिगत विकास के रूप में कार्यस्थल में घुसने की अनुमति न दें। इसकी बजाय, झगड़ों को सुलझाना और साथियों पर भरोसा करना सीखें, ताकि वे अपने सर्वश्रेष्ठ विचारों का योगदान करें। अपने कार्यदल के सदस्यों से सीखें और कार्यस्थल में और अधिक प्रभावशाली परिणामों की रचना के लिए एक-दूसरे की कुशलताओं पर भरोसा करें।

समूह से क्यों दूर भागते हैं हम?

शायद हर किसी को पता है कि सामूहिक रूप से काम करना न केवल आसान है, बल्कि ज्यादा कारगर भी है। फिर भी हर जगह यह देखने को मिलता है कि अधिकांश लोग सामूहिक कार्य (टीम वर्क) से भाग खड़े हो जाते हैं। वे ताल ठोकने लगते हैं कि वे अकेले ही सबकुछ कर सकते हैं। ऐसा क्यों होता है? मनोवैज्ञानिकों ने 'व्यक्तिवादी' कार्य-व्यवहार के पीछे कई कारण बताए हैं, जो इस प्रकार हैं—

अहं (ईगो) : हर व्यक्ति में 'आत्म-सम्मान' (सेल्फ एस्टीम) या 'आत्म-महत्त्व' (सेल्फ इम्पोर्टेंस) की भावना होती है, जिसे साधारण अर्थों में 'अहं' या 'अहंकार' (ईगो) कहा जाता है। इसी 'अहं' के चलते बहुत कम लोग स्वीकार कर पाते हैं कि सबकुछ कर पाना अकेले उनके बूते की बात नहीं हो सकती। वे अपने को किसी से कम समझने को तैयार नहीं होते। इसीलिए न तो वे दूसरों की क्षमता को परख पाते हैं और न ही दूसरों को महत्त्व दे पाते हैं। इस प्रकार, व्यक्ति का 'अहं' ही सामूहिक कार्य-भावना के विकास में सबसे बड़ी बाधा है। यही सबसे बड़ा कारण है कि अकसर सक्षम लोगों से गठित 'सामूहिक कार्यदल' भी प्रभावी नहीं हो पाते हैं। यह ऐसी भयानक समस्या है, जो जगह-जगह देखने को मिलती है। हर संगठन, कंपनी और यहाँ तक कि हर परिवार व्यक्तिगत 'अहं' की समस्या से जूझ रहा है। संयुक्त परिवार के तेजी से विघटन का मूल कारण 'व्यक्तिगत अहं' ही है और दांपत्य संबंधों में बिखराव का कारण भी यही है।

आखिर हम जीवन की इस सच्चाई को मानने को तैयार क्यों नहीं हैं कि न तो कोई पुरुष असाधारण है और न ही कोई स्त्री? परिवार, संगठन, समाज या देश का हर व्यक्ति समान रूप से महत्त्वपूर्ण है। सभी एक-दूसरे के 'पूरक' (कॉम्प्लीमेंट) हैं और अनुपूरक (सप्लीमेंट) भी। एक की कमी को दूसरा पूरा करता है, लेकिन सवाल यह नहीं है कि क्या आप हर काम स्वयं कर सकते हैं? असल मुद्दा यह है कि कितनी जल्दी आप यह समझ पाते हैं कि आप सबकुछ नहीं कर सकते? हाँ, आपको यह स्वीकार ही करना पड़ेगा कि आप अकेले बहुत आगे तक नहीं जा सकते, कोई महान् काम नहीं कर सकते। ऐसा करने के लिए आपको दूसरों की सहायता लेनी ही पड़ेगी और जब आप ऐसा सोचने लगेंगे, तो ही आप सही मायने में किसी सामूहिक कार्यदल का सार्थक हिस्सा बन सकेंगे।

सामूहिक कार्यदल की बदौलत कोई व्यक्ति कितनी बड़ी सफलता को सुनिश्चित कर सकता है, इसका बहुत बड़ा उदाहरण है—स्कॉटिश अमेरिकी उद्योगपति एंड्रयू कार्नेगी। पीछे, हमने विश्व इतिहास के सबसे प्रभावशाली कारोबारियों की सूची में कार्नेगी के बारे थोड़ा पढ़ा है। क्या आप जानते हैं कि उस व्यक्ति ने अपनी कार्नेगी स्टील कंपनी के जरिए किस तरह इस्पात उद्योग का भारी विस्तार किया था और अमेरिका को कृषि-प्रधान देश से 'विश्व की औद्योगिक महाशक्ति' बनाने में सबसे प्रमुख भूमिका निभाई थी? बहुत ही संघर्षपूर्ण बचपन बिताया था कार्नेगी ने। डनफर्मलाइन (स्कॉटलैंड) में पैदा हुआ कार्नेगी अपने गरीब माता-पिता के साथ अमेरिका आया था। बुनकर पिता व घरेलू काम-काज करनेवाली माता का सहयोग करने के लिए उसने 13 साल की उम्र में कपास कारखाने (कॉटन मिल) में अरेटन (बोबिन) बदलने का काम शुरू कर दिया था। फिर, तार-संदेशवाहक (टेलीग्राफ मैसेंजर) की नौकरी करता हुआ तार-यंत्र परिचालक (टेलीग्राफ ऑपरेटर) बन गया। उसके बाद लोहा-इस्पात उद्योग में

निवेश करते हुए, उसने कार्नेगी स्टील की स्थापना कर ली थी। फिर कार्नेगी ने धीरे-धीरे प्रतिस्पर्धी कंपनियों को खरीदना शुरू कर दिया था। देखते-देखते कार्नेगी स्टील दुनिया की सबसे बड़ी पिग आयरन, इस्पात रेल व कोक निर्माता बन गई थी, जिसका अमेरिका के लगभग 70 प्रतिशत इस्पात उद्योग पर कब्जा हो गया था।

कार्नेगी ने अपनी सफलता का राज खोलते हुए कहा था, “आपके विकास में यह एक बड़ा कदम साबित होता है, जब आप समझ जाते हैं कि जो आप अकेले करना चाहते हैं, उसे आप दूसरे की मदद से कहीं बेहतर तरीके से कर सकते हैं।” साफ है कि यदि आप सचमुच सफल होना चाहते हैं तो आपको व्यक्तिगत ‘अहं’ त्यागकर दूसरों की मदद हासिल करने के लिए सक्षम कार्यदल का हिस्सा बनना पड़ेगा।

असुरक्षा की भावना : सामूहिक कार्य-भावना के विकास व प्रभावी कार्यदल के गठन के रास्ते की दूसरी सबसे बड़ी बाधा है—असुरक्षा की भावना (सेंस ऑफ इनसिक्योरिटी)। आप जहाँ भी काम कर रहे हों, आपको ऐसे लोग जरूर मिल जाएँगे, जो अपने मातहत काम करनेवाले प्रतिभाशाली सहयोगी से ही ईर्ष्या करने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है? क्योंकि वह व्यक्ति अपनी ‘कमजोरियों’ के चलते असुरक्षा की भावना का शिकार हो जाता है। इसका नतीजा यह होता है किसी कार्यदल के नेतृत्वकर्ता के रूप में वह न केवल स्वयं असफल होता है, बल्कि अपने संगठन को भी भारी नुकसान पहुँचाता है। आप जरा गौर से देखें, जहाँ कहीं भी आपको विघटन नजर आता है, वहीं पर आपको असुरक्षा की भावना से ग्रसित नेतृत्वकर्ता भी नजर आ जाएगा।

हाँ, देखने की बात यह भी है कि कहीं आप भी असुरक्षा की भावना से ग्रसित व्यक्ति तो नहीं हैं? घबराने की बात नहीं, यह बहुत ही सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक बीमारी है, जो अधिकतर लोगों को अपनी चपेट में ले लेती है। याद रखें, अपने भीतर असुरक्षा की भावना की चेतावनी के संकेतों की खोज करना और उसको पनपने देने से रोकना भी आत्म-नियंत्रित (सेल्फ कंट्रोल्ड) व्यक्ति की कुशलता है। सफलता को सुनिश्चित करने के लिए यह एक आवश्यक कला है। क्योंकि, आप दुनिया की नजरों में भले ही कैसा भी दिखने की कोशिश करते हों, आपके अंदर की असुरक्षा-भावना हमेशा सामने ही आ जाएगी।

क्या इन संकेतों में से कोई भी आपको जाना-पहचाना सा लगता है?

- कहीं आप चुनौतियों से दूर तो नहीं भाग रहे? यदि आप असुरक्षा की भावना के शिकार हैं तो आप किसी प्रकार का जोखिम लेना पसंद नहीं करते। क्योंकि, आप सफल होने की अपनी क्षमता पर भरोसा नहीं करते। आप सूचनाओं को स्वाभाविक रूप से साझा नहीं करते; क्योंकि आप जानते हैं कि संचार सशक्तीकरण का एक रूप है। फिर हो सकता है कि आप नई चुनौतियों के प्रति बचाव की मुद्रा में आ जाएँ! और, यदि ऐसा हुआ, तो आप खुलकर मिलने-जुलने व बातचीत करने से कतराने लगेंगे।
- कहीं आप स्वयं को अच्छा दिखाने की कोशिश तो नहीं कर रहे? यदि आप अपने साथियों के कामकाज की तुलना में स्वयं के प्रदर्शन के बारे में; अपने कार्यदल की कार्यशैली की बजाय अपने शौक के बारे में; कितने अच्छे तरीके से लक्ष्य को प्राप्त किया जा रहा, की बजाय आपको कैसे पेश किया जा रहा है—के बारे में ज्यादा चिंतित हैं, तो आपको मान लेना चाहिए आप सफल नेतृत्वकर्ता नहीं बन पा रहे हैं और इसका सबसे संभावित कारण यह है कि आप असुरक्षा की भावना के शिकार हो रहे हैं।
- कहीं आप दूसरों को आगे बढ़ने में मदद करने से कतराने तो नहीं लगे हैं? असुरक्षित नेतृत्वकर्ता लोगों को अपने लिए काम करते हुए देखना पसंद करते हैं, न कि खुद को उनके साथ मिलकर काम करता हुआ। यदि उनके कार्यदल के किसी साथी को सार्वजनिक समर्थन प्राप्त होता है और उसमें उनकी चर्चा नहीं होती है, तो वे जलन महसूस करते हैं। यदि आपको अपने साथियों के विकास में निवेश करने, उन्हें बेहतर, होशियार व ज्यादा तेज

बनाने के लिए जरूरी सुविधाओं से लैस करने का विचार स्वयं के लिए खतरा पैदा करनेवाला लगता है, तो यह तय है कि आप असुरक्षा की भावना के शिकार बन चुके हैं।

- कहीं आप दूसरे का निरादर तो नहीं करने लगे हैं? जब आप खुद को असुरक्षित महसूस करते हैं तो अपने लिए आदर हासिल करने के लिए कठिन परिश्रम करते हैं। खुद को आगे बढ़ाने के लिए कई बार आप दूसरों को नीचा दिखाने की कोशिश भी करते हैं। ऐसे में आपको अपनी खुद की स्थिति अपर्याप्त लग रही होती है और आप दूसरों का अपमान कर खुद को तरक्की देने की कोशिश भी करते हैं।
 - कहीं आपको ऐसा तो नहीं लगता कि आप ही सबकुछ जानते हैं? असुरक्षित नेतृत्वकर्ता को स्वयं को 'महत्त्वहीन' (इनसिग्निफिकेंट) व 'अयोग्य' (इनकंपीटेंट) दिखाने से डर लगता है और वे इसकी भरपाई 'सबकुछ जानने' का नाटक से करते हैं। वे कभी-कभार ही सवाल करते हैं और जब वे ऐसा करते हैं, तो वे लगभग कभी भी उत्तर का इंतजार नहीं करते।
 - कहीं आप खुद को बंद दरवाजे के भीतर तो नहीं रख रहे? यदि आप स्वयं को अपने कर्मचारियों, सहकर्मियों, ग्राहकों या अपने पीछे चलनेवालों से सुरक्षित दूरी रखने की कोशिश करते हैं, तो आप इस डर को स्थान देते हैं कि आपकी अक्षमता या योग्यता सबके सामने आ जाएगी! यही आशंका आपको बेहद निजी जानकारी को नियंत्रित करने के लिए प्रेरित भी कर सकती है।
 - कहीं आप झगड़ों को निपटाने से कतरा तो नहीं रहे? असुरक्षित नेतृत्वकर्ता पसंद किए जाने की भावना से प्रेरित होते हैं। वे चाहते हैं हरेक व्यक्ति हमेशा उनके बारे अच्छा ही सोचे। इसीलिए, वे अकसर झगड़ों से निपटने से मना कर देते हैं; और वे इस डर के मारे संवेदनशील मुद्दों से मुँह चुराने लगते हैं कि एक पक्ष या दूसरा पक्ष उन्हें पसंद करना छोड़ देगा।
- हम सभी में समय-समय पर असुरक्षा की ओर जाने की प्रवृत्तियाँ हैं, लेकिन यदि आप असुरक्षा-भावना से जन्म लेनेवाले हानिकारक व्यवहार की तरफ न जाना सुनिश्चित करें, तो आप बहुत ही अच्छा नेतृत्वकर्ता, शासक (बॉस) व व्यक्ति बन सकेंगे।



अध्याय-2

सामूहिक कार्य का प्रभाव

“प्रतिभा खेल जीतती है, लेकिन सामूहिक कार्य व बुद्धिमत्ता प्रतियोगिताएँ जीत जाती हैं।”

— माइकल जॉर्डन

माइकल जॉर्डन विश्व इतिहास का सबसे महान् बास्केटबॉल खिलाड़ी माना जाता है। क्या आपको पता है कि 1980 व 1990 के दशक में खेल प्रशंसक उससे प्रेरित नहीं होते थे? लेकिन, उसकी अंतिम दो छलाँगों, हवाई डुबकियों व दृढ़तापूर्वक बचाव की मुद्रावाली तस्वीरों ने उसे भीड़ को खुश रखनेवाला सबसे पसंदीदा खिलाड़ी बना दिया था। बाद में, जॉर्डन को अरबपति बननेवाले पहले खिलाड़ी के रूप में पहचाना गया था। हम उसकी सफलता से क्या सीख सकते हैं?

जब माइकल जॉर्डन ने एनबीए में खेलना शुरू किया था, तो उसने स्वयं को उत्कृष्टता के व्यक्तिगत योगदानकर्ता का प्रतीक बना लिया था। शिकागो बुल्स के साथ अपने पहले पाँच सत्रों में जॉर्डन ने अतिमानवीय प्रदर्शन किए थे। फिर भी, वे शिकागो बुल्स को प्रतियोगिता विजेता (चैंपियन) बनाने में सफल नहीं हो सके थे, लेकिन जब फिल जैक्सन शिकागो बुल्स का मुख्य प्रशिक्षक (हेड कोच) बने थे, तो उन्होंने अति प्रतिभाशाली व बेहद सफल युवा खिलाड़ी जॉर्डन की व्यक्तिवादी सोच को बदलना शुरू किया था और अंततः शिकागो बुल्स ने प्रतियोगिता जीतना शुरू कर दिया था।

‘हम’ के लिए ‘मैं’ का आत्मसमर्पण

जी हाँ, फिल जैक्सन ही वह व्यक्ति थे, जो जॉर्डन को यह समझा पाने में सफल रहे थे कि उसकी व्यक्तिगत उत्कृष्टता (इंडिविजुअल एक्सीलेंस) शिकागो बुल्स को प्रतियोगिता विजेता बनाने के लिए काफी नहीं थी। जैक्सन ने उन्हें एहसास कराया था कि उन्हें टीम की सफलता के लिए अपनी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा का त्याग करना होगा और टीम के अन्य खिलाड़ियों के साथ मिलकर खेलना होगा। जैक्सन ने बाद में कहा था कि आखिरकार जॉर्डन ने ‘हम’ के लिए ‘मैं’ का आत्मसमर्पण कर दिया था। फिर, जैक्सन ने जॉर्डन को बहुचर्चित बास्केटबॉल खेल रणनीति — ‘ट्रिभुज आक्रमण’ (ट्रायंगल ऑफेंस) का हिस्सा बनने के लिए तैयार किया था।

उस समय तक, जॉर्डन को लगता था कि उसे अपने ही दम पर खेल प्रतियोगिता जीतने की जरूरत थी, क्योंकि उसे विश्वास नहीं था कि उसके साथी खिलाड़ी एक समूह बनाकर बेहतर प्रदर्शन कर सकेंगे! यही कारण था कि जॉर्डन अपने अतिमानवीय व्यक्तिगत प्रदर्शन से खेल जीतते रहे थे और खुद को महानतम खिलाड़ियों की सूची में भी शामिल करने में सफल रहे थे, लेकिन उनका बेहद लोकलुभावन एकल प्रदर्शन (वन मैन शो) शिकागो बुल्स को प्रतियोगिता (चैंपियनशिप) जिताकर शिखर पर लाने में असफल ही रहा था। इतना ही नहीं, जॉर्डन अपने साथी खिलाड़ियों के साथ दोस्ती बढ़ाने के लिए भी बहुत ही कम समय बिताते थे। चाहे वह खेल का मैदान हो या फिर सामाजिक गतिविधि, वह हमेशा ‘सुपरस्टार’ अभिनेताओं जैसा व्यवहार करते थे। अंध-समर्थक प्रशंसकों की भीड़ उसे घेरे रखती थी और वह अपने नजदीकी व्यक्तिगत मित्रों के साथ ही मौज-मस्ती करते थे। इसीलिए, अन्य साथी

खिलाड़ियों को कभी भी ऐसा नहीं लगता था कि वे भी शिकागो बुल्स के ही खिलाड़ी थे, बल्कि वे 'माइकल जॉर्डन शो' के गुमनाम सहायक कलाकारों जैसा महसूस करते थे।

फिल जैक्सन इस समस्या को आसानी से देख सकते थे। इसीलिए, वह जॉर्डन के पास गए थे और उनसे कहा था कि शिकागो बुल्स को उसके 'नेतृत्व' की जरूरत थी। जैक्सन ने उनको समझाया था कि नेतृत्वकर्ता होने के नाते सबसे पहले उसे अपने साथियों के साथ समय बिताने की और उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानने की जरूरत थी। जैक्सन ने उन्हें बताया था कि जब वह अपने साथी खिलाड़ियों के साथ रहेगा तो 'शिकागो बुल्स' की पारंपरिक सामूहिक कार्य-भावना (टीम वर्क स्पिरिट) मजबूत होगी। जैक्सन ने जॉर्डन को बताया था कि जब वह अपने साथी खिलाड़ियों के बीच मौजूद रहेंगे और उन पर भरोसा करेंगे, तो ही वे यह एहसास कर सकेंगे कि जॉर्डन उन्हें बास्केटबॉल खिलाड़ी व व्यक्ति-विशेष के रूप में महत्व देता है।

जॉर्डन को भी यह समझते देर नहीं लगी थी कि फिल जैक्सन बिल्कुल ठीक कह रहा था। उसके बाद जॉर्डन ने अपने व्यवहार में आमूल-चूल परिवर्तन कर लिया था। वह खेल के मैदान में और उसके बाहर भी, अपने साथी खिलाड़ियों के साथ अधिक-से-अधिक समय बिताने लगा था। जैक्सन के लिए भी यह बहुत बड़ा प्रयोग था और वह जॉर्डन की हर गतिविधि पर नजर रख रहा था। उसने देखा था कि जॉर्डन की मौजूदगी ने जल्द ही पूरी टीम की मानसिकता को बदलना शुरू कर दिया था। अब जॉर्डन हरेक खिलाड़ी से इतना घुल-मिल गए थे कि वह किसी को भी बेहतर खेल के लिए चुनौती दे सकते थे और सभी खिलाड़ी उसकी उम्मीदों पर खरे उतरने के लिए कड़ी मेहनत करने में लग पड़े थे। जब कोई साथी जॉर्डन की चुनौती को पूरा कर दिखाता, तो वह उसे सीने से लगा लेते थे। अब जॉर्डन दैनिक अभ्यास से पहले हर युवा खिलाड़ी से अलग-अलग बात करते थे और उन्हें अपनी कमियों को पूरा करने के तरीके बताते थे। फिर, जब वे अभ्यास के लिए मैदान में उतरते थे तो पहले से बेहतर प्रदर्शन करते थे। अपने साथियों के सुधार को देखकर जॉर्डन बहुत खुश होते थे और अभ्यास के बाद उनके साथ खूब मौज-मस्ती भी करने लगे थे।

इतना ही नहीं, अब जॉर्डन पूरी तरह से फिल जैक्सन के सामूहिक कार्य दर्शन (टीम वर्क फिलॉसफी) को मानने लगे थे। वह न केवल अपने साथी खिलाड़ी को सुझाव देते थे, बल्कि हरेक को अपनी राय रखने के लिए उकसाने लगे थे। धीरे-धीरे उसने अपने हर साथी खिलाड़ी को इतना प्रोत्साहित कर दिया था कि उन्होंने जॉर्डन से डरे बिना खुलकर अपने विचार रखने शुरू दिए थे। जॉर्डन हरेक के सुझाव को बराबर महत्व देने लगे थे। जैक्सन अकसर रुडयार्ड किपलिंग की 'द जंगल बुक' का हवाला देकर जॉर्डन व अन्य खिलाड़ियों को जंगल के नियम बताते थे। "झुंड की ताकत लोमड़ी है और लोमड़ी की ताकत झुंड।"

अब जॉर्डन व जैक्सन ने शिकागो बुल्स के बाकी सभी खिलाड़ियों के दिलोदिमाग में यह बात भरनी शुरू कर दी थी कि उनकी टीम विश्व-प्रतियोगिता (वर्ल्ड चैंपियनशिप) की हकदार थी। फिर माइकल जॉर्डन ने अपनी टीम के दूसरे सबसे प्रतिभाशाली खिलाड़ी स्कॉटी पिप्पन के साथ मिलकर साथी खिलाड़ियों की शारीरिक अनुकूलता (फिजिकल कंडीशनिंग) को उच्च स्तर पर लाने के लिए जबरदस्त अभ्यास कार्यक्रम शुरू किया था। जल्द ही वे दोनों अपने साथियों को यह विश्वास दिला पाने में सफल हो गए थे कि दुनिया की अन्य कोई टीम उनकी जैसी कड़ी मेहनत करने में सक्षम नहीं थी। मतलब शिकागो बुल्स ही विश्व प्रतियोगिता पुरस्कार जीतने के लिए सबसे ज्यादा योग्य थी।

इस तरह, फिल जैक्सन अब विश्व बास्केटबॉल का नया इतिहास रचने की तैयारियाँ पूरी कर चुके थे। जॉर्डन सहित शिकागो बुल्स के हर खिलाड़ी ने स्वीकार कर लिया था कि सामूहिक कार्य ही बास्केटबॉल की महानता का

मार्ग है। यही कारण था कि 1991 की शुरुआत में जब शिकागो बुल्स ने पहली विश्व प्रतियोगिता जीती थी, दुनिया भर के दिग्गज खेल पर्यवेक्षक, समीक्षक व प्रशंसक यह देखकर हैरान थे कि इस बार जॉर्डन के साथ-साथ अन्य सभी खिलाड़ियों ने भी चौंकानेवाले प्रदर्शन किए थे। अब खेल के मैदान का दृश्य बदल गया था; अब सिर्फ जॉर्डन ही सुपरस्टार नहीं था, बल्कि उसकी टीम के हर खिलाड़ी भावी सुपरस्टार की तरह खेलने लगे थे; और शिकागो बुल्स 'शो ऑफ जॉर्डन' से 'टीम ऑफ जॉर्डन' बन गई थी। सभी दाँतों तले उँगली दबाए 'शिकागो बुल्स' के इस ऐतिहासिक प्रदर्शन को देख रहे थे। जब खेल-अंकों की गणना (स्कोर) खेल समाप्ति की ओर बढ़ रही थी, तो सभी को यही उम्मीद थी कि अब जॉर्डन खुद ही बॉल माँगना शुरू करेगा, जैसा कि इससे पहले वे हर प्रतियोगिता में किया करते थे, लेकिन इस बार ऐसा कुछ भी नहीं हुआ; उसमें कोई बेचैनी नहीं दिख रही थी। वह आत्मविश्वास से लबालब था और वह अपने दूसरे साथियों की ओर बॉल बढ़ा रहा था और वे सभी खिलाड़ी शानदार प्रदर्शन कर रहे थे और इस तरह जॉर्डन ने 1992 व 1993 की भी विश्व प्रतियोगिताएँ जीतकर शिकागो बुल्स के खाते में 'श्री पीट' (लगातार तीसरी जीत) भी डाल दिया था।

चौंकिए मत, 1993-94 में खेल-प्रतियोगिताओं का मौसम शुरू होने के ठीक पहले (6 अक्टूबर, 1993) माइकल जॉर्डन ने अचानक बास्केटबॉल से सेवानिवृत्त होकर बेसबॉल में पेशेवर जीवन शुरू करने घोषणा कर दी थी। उस समय उन्होंने यही बताया था कि अब उसका और ज्यादा बास्केटबॉल खेलने का मन नहीं था, लेकिन बाद में उन्होंने बताया था कि पिता की हत्या (23 जुलाई, 1993) के शोक से उबरने के बाद उसने पिता के सपने को पूरा करने के लिए बेसबॉल को अपनाने का फैसला किया था। करीब दो वर्षों बाद भी, जॉर्डन ने जब बास्केटबॉल में दुबारा आने की घोषणा (23 मार्च, 1995) करते हुए बस इतना कहकर कि 'मैं वापस आ गया हूँ' (आई एम बैक), सबको चौंका दिया था। असल में, वह बेसबॉल में जारी हड़तालों के कारण उकता गया था और शिकागो बुल्स के उसके पुराने गुरु जैक्सन सहित सारे साथी खिलाड़ी उस पर फिर से वापस आने का दबाव डाल रहे थे।

जी हाँ, जॉर्डन के बिना भी शिकागो बुल्स ने शानदार प्रदर्शन तो किए थे, लेकिन पिछले दो मौसमों में विश्व-प्रतियोगिता जीतने का सिलसिला टूट गया था। जॉर्डन के नेतृत्व में शिकागो बुल्स ने 1996, 1997 व 1998 की लगातार तीन विश्व प्रतियोगिताएँ जीतकर एक बार फिर से 'श्री पीट' हासिल करने का कीर्तिमान बनाया था। इतना ही नहीं, वापसी के पहले मौसम (1995-96) में शिकागो बुल्स ने 72 प्रतियोगिताएँ जीतने का भी कीर्तिमान कायम किया था। उसके बाद, जनवरी 1999 में जॉर्डन ने दुबारा से संन्यास की घोषणा कर दी थी, हालाँकि उसने 2001 से 2003 तक 'वाशिंगटन विजाडर्स' के अध्यक्ष के रूप एक बार फिर से वापसी की थी।

जॉर्डन को तब बड़ा धक्का लगा था, जब 'वाशिंगटन विजाडर्स' के स्वामी ने 7 मई, 2003 को उसे अचानक बाहर निकाल दिया था, लेकिन जॉर्डन ने अगले कुछ वर्षों तक स्वयं को आकार में बनाए रखने, दान के आयोजित प्रसिद्ध खिलाड़ियों की गोल्फ प्रतियोगिताओं, शिकागो में अपने परिवार के साथ समय बिताने, अपने 'जॉर्डन ब्रांड' की वस्त्र शृंखला को प्रचारित करने और कपड़े लाइन को बढ़ावा देने और मोटरसाइकिल की सवारी करने में व्यस्त बनाए रखा था। फिर, 2006 में जॉर्डन ने पेशेवर अमेरिकन बास्केटबॉल टीम 'शेल्लोट होरनेट्स' (शेल्लोट, नॉर्थ कैरोलिना) में दूसरी सबसे बड़ी हिस्सेदारी खरीद ली थी और 2010 (27 फरवरी) में नियंत्रणकारी स्वामित्व (80 प्रतिशत) हासिल कर लिया था।

10 जून, 2010 को 'फोर्ब्स' पत्रिका ने जॉर्डन को विश्व का 20वाँ सबसे शक्तिशाली प्रसिद्ध व्यक्ति घोषित कर दिया था, जिसका आधार 5.5 करोड़ डॉलर की उसकी सालाना आमदनी थी। 'फोर्ब्स' के मुताबिक उस समय जॉर्डन ब्रांड 'नाइके' के लिए 1 अरब डॉलर की कमाई कर रहा था। जून 2014 में जब जॉर्डन ने शेल्लोट होरनेट्स

में अपनी हिस्सेदारी को बढ़ाकर 89.5 प्रतिशत किया था, तो उसे नेशनल बास्केटबॉल एसोसिएशन (एनबीए) का पहला अरबपति खिलाड़ी घोषित किया गया था। नवंबर 2015 को 'फोर्ब्स' पत्रिका ने उसका निवल मूल्य (नेट वर्थ) 1.10 अरब डॉलर आँका था, जब वह अमेरिका का सबसे धनी अफ्रीकी-अमेरिकी बन गया था और विश्व का दूसरा सबसे धनी अश्वेत अरबपति (ब्लैक बिलियनरी)।

अधिकारी बनें या फिर दोस्त ही रहें?

लेकिन, सामूहिक कार्य के प्रतीक बन चुके माइकल जॉर्डन के लिए टीम का स्वामी बनने का सफर आसान नहीं रहा था। क्या आप जानते हैं कि किसी भी पेशेवर के लिए सबसे मुश्किल क्षण कब आता है? जब वह सहकर्मी से अधिपुरुष (बॉस) या स्वामी (ओनर) बनता है। क्योंकि, अब तक वह जिन लोगों का मित्र था, वे अचानक उसके सहकर्मी बन जाते हैं। यह कोई आसान काम नहीं होता है। माइकल जॉर्डन के सामने भी यही चुनौती आई थी, जब वे नेशनल बास्केटबॉल एसोसिएशन (एनबीए) की फ्रेंचाइजी टीम 'शेल्लोट होरनेट्स' का स्वामी बन गए थे।

जॉर्डन की मुश्किल यह थी कि अब वह सिर्फ टीम का स्वामी ही नहीं था, बल्कि टीम स्वामियों की समिति 'एनबीए ओनर्स कमेटी' का नया सदस्य भी बन गए थे। उस समिति का मुख्य काम खिलाड़ियों के संगठन 'एनबीए प्लेयर्स एसोसिएशन' के साथ राजस्व साझेदारी अनुबंध (रेवेन्यू शेयरिंग कॉन्ट्रैक्ट) की सौदेबाजी करना था। समूचे देश के बास्केटबॉल समुदाय के लिए सबसे खुशी की बात तो यही थी कि एनबीए का सबसे महान् खिलाड़ी अब शेल्लोट होरनेट्स का स्वामी होने के नाते बास्केटबॉल बाजार की संभावनाओं को बढ़ानेवाला था। वैसे तो शेल्लोट अमेरिका के दक्षिणी-पूर्वी प्रांत नॉर्थ कैरोलिना का सबसे बड़े शहर था, लेकिन अमेरिका के अन्य प्रांतों की तुलना में वह बहुत ही छोटा बास्केटबॉल बाजार था। एनबीए टीम स्वामियों के लिए खुश होने का बड़ा कारण यह था कि माइकल जॉर्डन जिन बास्केटबॉल खिलाड़ियों के साथ सौदेबाजी करनेवाला था, उनमें से अधिकांश उसे अपना आदर्श-पुरुष मानते थे। उनके लिए इससे भी बड़ी बात यह थी कि जॉर्डन एनबीए प्लेयर्स एसोसिएशन के तत्कालीन उपाध्यक्ष ली बैरन जेम्स के साथ सौदा पटाने जा रहा था, जो उसका कट्टर समर्थक व प्रशंसक भी था। उस वक्त भी ली बैरन जेम्स क्लीवलैंड केवलियर्स (क्लीवलैंड, ऑहियो) के लिए ही खेल रहे थे।

लेकिन माइकल जॉर्डन की सबसे मुश्किल उसका भूतकाल ही थी। उसने 1998 में एनबीए प्लेयर्स एसोसिएशन के प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न टीमों के स्वामियों के साथ सौदेबाजी की थी। खिलाड़ी होने के नाते उस समय उसका नजरिया खिलाड़ियों के पक्ष में ही था। उस समय जॉर्डन ने 'वाशिंगटन विजार्ड्स' के स्वामी (जिसके लिए वह बाद में खेलनेवाला भी था) के साथ बहुत तीखी बहस की थी और कहा था, "यदि तुम लाभ नहीं कमा सकते तो तुम्हें टीम बेच देनी चाहिए।" लेकिन अब वे खुद ही टीम स्वामियों का प्रतिनिधि थे। साफ था कि अब जॉर्डन की बोली बदलनेवाली थी। अब वह स्वाभाविक रूप से स्वामियों के हितों को ही प्राथमिकता देनेवाला था।

यदि आपको भी कर्मचारी से प्रबंधन में जाने का अवसर मिला हो, तो आपके लिए जॉर्डन की मुश्किल का अनुमान लगा पाना बहुत ही आसान होगा। फिर, आपको याद आ जाएगा कि किस तरह आपकी बोली भी बदल गई थी! यदि आपको ऐसा मौका नहीं मिला है तो भविष्य में मिल सकता है। ऐसे में आपको जॉर्डन से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है—

● आपको एक पक्ष तो चुनना ही पड़ेगा

आप अपने सहकर्मियों के दोस्त भी हो सकते हैं, लेकिन जब आप सहकर्मी से प्रबंधक के रूप में पदोन्नत हो जाएँगे, तो पुरानी दोस्ती को निभा पाना लगभग असंभव हो जाएगा। यह भले ही तकनीकी तौर पर संभव है, लेकिन

आपको एक साथ 'दोस्त' व 'अधिकारी' दोनों बने रहने की सलाह नहीं दी जा सकती।

अधिकारी का व्यवहार दोस्ताना हो सकता था। अधिकारी को अपने मातहत काम कर रहे लोगों के साथ हमेशा गरिमा व सम्मान के साथ पेश आना चाहिए, लेकिन एक अधिकारी को अपने मातहतों के साथ दोस्ती निभाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। यदि आप अधिकारी बन जाने के बाद भी अपने सहकर्मियों के साथ पहले की तरह दोस्ताना रवैया बनाए रखते हैं, तो बहुत अधिक आशंका है कि आप दोस्ती भी खो देंगे और प्रभावी नेतृत्वकर्ता भी नहीं बन सकेंगे।

जॉर्डन का रवैया बिल्कुल साफ था। अब वह खिलाड़ी नहीं, बल्कि टीम का स्वामी था। भले ही वह अब भी अपने पुराने साथी खिलाड़ियों के साथ बहुत ही गरिमा व सम्मान के मिलता-जुलता था, लेकिन उसके स्वर में स्वामीवाला भाव आ गया था। अब कोई भी खिलाड़ी उससे खुलकर अपनी बात तो कह सकता था, लेकिन उसे अपनी बात मानने के लिए मजबूर नहीं कर सकता था। मालिक होने के नाते जॉर्डन ने अब खिलाड़ियों के साथ सम्मानजनक दूरी कायम कर ली थी।

● पाखंडी होने के आरोप से निपटना होगा

बहुत अधिक संभावना है कि जब आप कर्मचारी से अधिकारी या स्वामी बन जाएँ तो आप पर पाखंडी होने का आरोप लगे, लेकिन आप किसी का मुँह तो बंद नहीं कर सकते, लेकिन खुद को मनोवैज्ञानिक रूप से दृढ़ रखना होगा और संयम से उस समस्या से निपटना होगा। यही कारण था कि जब जॉर्डन ने एनबीए प्लेयर्स एसोसिएशन के तत्कालीन उपाध्यक्ष ली बैरन जेम्स के साथ सौदेबाजी शुरू की थी तो उसका तर्क बदला हुआ था।

1998 की सौदेबाजी के दौरान जॉर्डन ने एनबीए की आदमनी में खिलाड़ियों के लिए ज्यादा हिस्सेदारी की माँग करते हुए तीखी बहस की थी, जबकि स्वामियों की समिति उसकी माँग को अनुचित बता रही थी। टीम स्वामियों का तर्क था कि यदि खिलाड़ियों को आमदनी का बड़ा हिस्सा दिया गया तो विशेष रूप से छोटे बाजारों की टीमों को नुकसान होगा और वे बड़े बाजारों की टीमों के साथ प्रतिस्पर्धा कर पाने में असक्षम हो जाएँगी। मतलब, शेल्लोट, साल्ट लेक व ओक्लाहोमा जैसे छोटे बाजारों की टीमों शिकागो, न्यूयॉर्क या लॉस एंजिल्स जैसे बड़े बाजारों की टीमों के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकेंगी। उस समय, चूँकि जॉर्डन खिलाड़ियों का प्रतिनिधि था, इसीलिए उसे टीम स्वामियों की आशंकाएँ तार्किक नहीं लग रही थीं, लेकिन अब वह स्वामियों के पक्ष में वही पुराना तर्क पेश कर रहा था।

ली बैरन जेम्स के साथ-साथ 'एनबीए प्लेयर्स एसोसिएशन' के अधिकांश खिलाड़ी सदस्य जॉर्डन के नए रुख से बुरी तरह आहत हुए थे। असल में, शिकागो बुल्स की ऐतिहासिक जीतों के दौरान जॉर्डन की सावर्जनिक छवि 'खिलाड़ियों के महानायक' की सी हो गई थी, जो अब तक खिलाड़ी हितों की ही बातें करता रहा था। इसीलिए, खिलाड़ियों ने अब जॉर्डन पर पाखंडी हो जाने का आरोप लगाना शुरू कर दिया था, लेकिन जॉर्डन ने कोई तीखी प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की थी। जॉर्डन ने आरोपों को धैर्य के साथ सहा था और खिलाड़ियों को असलियत समझाने की कोशिश करता रहा था। उसका तर्क यह था कि वह छोटी टीमों के आर्थिक हितों की सुरक्षा कर खिलाड़ियों का भविष्य भी सुरक्षित कर रहा था।

वैसे अधिकतर खिलाड़ियों को भी यह बात समझ में आ रही थी कि जॉर्डन बिल्कुल सही बात कर रहा था। वे व्यक्तिगत रूप से जॉर्डन की बातों से सहमत थे कि यदि छोटे बाजारों की टीमों लाभ नहीं कमाएँगी तो बास्केटबॉल बाजार का विकास नहीं होगा और फिर खिलाड़ियों के लिए भी खेलने के अवसर सीमित हो जाएँगे। फिर भी, वे प्रकट रूप से जॉर्डन को पाखंडी कहने से बाज नहीं आ रहे थे। साफ है कि जॉर्डन ने उन आरोपों को नजरअंदाज

करना ही बेहतर समझा था।

- अपनी सफलता के स्वामी बनें

ध्यान रहे कि पदोन्नति यूँ ही नहीं मिलती, इसके पीछे कुछ ठोस कारण होते हैं। इसीलिए जब आगे बढ़ने का मौका मिले, तो पूरे आत्मविश्वास के साथ स्वीकार करें। जब तक आप अपनी सफलता का स्वामी नहीं बनते, तब तक सफलता आपकी नहीं हो सकती। यही कारण था कि माइकल जॉर्डन पहला ऐसा पूर्व खिलाड़ी साबित हुआ था, जो किसी टीम की अधिकांश हिस्सेदारी का स्वामी भी बना। विश्व इतिहास का महानतम बास्केटबॉल खिलाड़ी होने की हैसियत ने जॉर्डन को इतने वित्तीय संसाधन प्रदान कर दिए थे कि वह टीम का स्वामी बनने के अवसर को पकड़ सकता था।

इसीलिए, सहकर्मी से अधिकारी के अवसर को पकड़ने में घबराने की जरूरत नहीं है, बल्कि यह मानने की जरूरत है कि आप उसके हकदार हैं। हाँ, ध्यान रखने की बात यह भी है कि सफलता आपके सिर पर न चढ़े। अपने पूर्व सहकर्मियों के साथ गरमजोशी का बरताव रखें, लेकिन इस बात से भी न घबराएँ कि यदि आप प्रभावी अधिकारी की भूमिका अदा करेंगे तो वे आप पर 'पाखंडी' होने का आरोप लगाएँगे। आप आरोपों को अनसुना करें और अपनी नई जिम्मेदारी को धैर्य व साहस के साथ निभाएँ। आप जो बन चुके हैं, उस जिम्मेदारी से आप पीछे नहीं हट सकते। यही आपकी भविष्य की दूसरी सफलताओं का रास्ता साफ करेगा।

प्रभावी कार्यदल नेतृत्वकर्ता कैसे बनें?

अब कार्यदल नेतृत्वकर्ता (टीम लीडर) की अवधारणा बदल गई है। अब नेतृत्वकर्ता सिर्फ अपने आसपास मेज-कुरसी पर बैठे लोगों से बने किसी कार्यदल के लिए ही जिम्मेदार नहीं होता है। आजकल किसी नेतृत्वकर्ता को कई विभागों या संगठनों और कई बार दुनिया भर में फैले हुए कार्यदलों का प्रबंधन करना पड़ता है। उन कार्यदलों में विभिन्न प्रकार की व्यक्तिगत कुशलताओं व विशेषज्ञताओंवाले लोग होते हैं। उन्हें उनकी क्षमताओं के कारण ही विशिष्ट परियोजनाओं पर ध्यान केंद्रित करने के लिए एक साथ लाना पड़ता है, न कि आपस में मिलकर काम करने की जरूरतों के लिए।

कार्यदल नेतृत्वकर्ता का असल काम यह होता है कि वह अपने मातहत काम करनेवाले विभिन्न व्यक्तियों या कार्यदलों को कितनी तेजी से एक साथ ला सकता है? आम लक्ष्यों व उद्देश्यों पर कार्यदलों को सहमत करना ही नेतृत्व की सबसे बड़ी चुनौती होती है। इसका मतलब कार्यदल नेतृत्वकर्ता को व्यक्ति-विशेषों को आपसी मतभेदों को निकाल बाहर फेंकने का मौका देना और प्रत्येक व्यक्ति द्वारा कार्यदल में किए जानेवाले योगदानों की पहचान करना भी हो सकता है।

इसीलिए जब तक कि हरेक कार्यदल आम लक्ष्य की दिशा में काम करने के लिए तैयार नहीं हो जाता है, तब तक सहयोगी कार्यदलों के बीच में ही अटक जाने का खतरा बना रहता है। ऐसी स्थिति में, विभिन्न कार्यदल अपने-अपने विचारों को लेकर ही आपस में लड़ते रह जाते हैं। इससे भी बुरी हालत तब होती है, जब किसी कार्यदल में मामूली समर्थन से ज्यादा प्रभावशाली व्यक्तित्व उभरकर सामने आ जाता है।

तो, प्रभावी कार्यदल नेतृत्वकर्ता और सफल कार्यदल के लिए आवश्यक तत्त्व क्या हैं?

- स्पष्ट लक्ष्यों का निर्धारण

कार्यदलों के गठन की प्रारंभिक अवस्थाओं में सबसे बड़ी चुनौती स्पष्ट लक्ष्यों का निर्धारण होता है। प्रभावी कार्यदल नेतृत्वकर्ता को हमेशा अपने कार्यदल व संगठन, दोनों के भविष्य पर सामान नजर रखनी होती है। ऐसे में,

यदि संगठन के लक्ष्य स्पष्ट नहीं हैं तो नेतृत्वकर्ता के लिए सही कुशलताओंवाले सही कार्यदल की खोज कर पाना मुश्किल हो जाएगा।

सावधान! अपने अंदर से आई भावना (गट फील) के आधार पर कार्यदल का गठन न करें। मानव-संसाधन प्रबंधन के मानदंडों पर ही नियुक्ति की समूची प्रक्रिया पूरी की जाए, लेकिन यह तब तक संभव नहीं हो सकेगा, जब तक कि संगठन के लक्ष्य स्पष्ट नहीं होंगे। ऐसे में, निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखकर विभिन्न कुशलताओं व विशेषज्ञताओंवाले कार्यदल का गठन करना पड़ता है। साथ ही, हर कार्यदल में कौशल, व्यक्तित्व व व्यवहार का अच्छा संतुलन भी बनाना पड़ता है।

● समावेशी कार्य-संस्कृति का विकास

किसी भी कार्यदल को प्रभावी ढंग से काम करने के लिए दूसरे कार्यदलों के विचारों व कुशलताओं को भी मान्यता देनी पड़ती है। इसीलिए प्रभावी कार्यदल-नेतृत्वकर्ता को समावेशी कार्य-संस्कृति (इनक्लूसिव वर्क-कल्चर) का विकास करना होता है, जहाँ तीखे विचारों व तर्कों को सहजता के साथ सुना, समझा व स्वीकार किया जा सकता है। प्रभावी नेतृत्वकर्ता कार्यदल में कभी भी हावी हो जानेवाले व्यक्ति-विशेष के अहं को प्राथमिकता नहीं देता।

हाँ, ध्यान रखने की बात यह है कि व्यक्तियों को स्वयं की कुशलताओं व योग्यताओं के आधार पर ही अपने विचार प्रस्तुत करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इससे सभी व्यक्ति-विशेषों को कार्यदल के फैसलों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालने का मौका मिलता है और वे खुद को कार्यदल के साथ ज्यादा जुड़ा हुआ महसूस करते हैं। किसी भी व्यक्ति-विशेष में उतनी क्षमता नहीं होती कि वह हर प्रकार के सवालों का उचित जवाब दे सके इसीलिए जब कोई प्रभावी नेतृत्वकर्ता अपने कार्यदल में समावेशी कार्य-संस्कृति का विकास करता है तो सभी एक-दूसरे की विशेषज्ञता का लाभ उठाते हैं और हर प्रकार की समस्या का सबसे उत्तम हल निकाल पाते हैं।

● टकराव को गले लगाएँ

ज्यों ही कार्यदल आगे बढ़ता है, तो विभिन्न प्रकार के विचारों के बीच ध्यान खींचने की होड़ लग जाती है। ऐसे में कार्यदल को एक साथ कई मुद्दों को संबोधित करना पड़ता है। जैसे उनसे किन समस्याओं को हल करने की अपेक्षा की जाती है; वे व्यक्तिगत रूप से और एक साथ मिलकर कैसे काम करेंगे? यह अवस्था कार्यदल के उन सदस्यों के लिए विवादास्पद, अप्रिय व कष्टदायक भी हो सकता है, जो टकराहट से गुरेज कर रहे होते हैं? लेकिन यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि किसी कार्यदल में इस प्रकार के वैचारिक व व्यक्तिगत टकराव रचनात्मक होने के साथ विध्वंसक भी हो सकते हैं। तो सबकुछ कार्यदल नेतृत्वकर्ता पर निर्भर करता है कि वह इस टकराहट की स्थिति से कैसे निपटता है?

तो प्रभावी व सफल नेतृत्वकर्ता वही होता है, जो विचारों की टकराहट की स्वाभाविकता को गले लगाता है और कार्यदल, संगठन व व्यक्ति-विशेष के व्यापक हितों में उस स्थिति का उपयोग करता है। ऐसी स्थिति में कार्यदल नेतृत्वकर्ता को बहुत सी सावधानियाँ बरतनी पड़ती हैं; उसे स्वयं को सबकी पहुँच के दायरे में रखना होता है; उसे सबकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनने के लिए तैयार रहना पड़ता है; और फिर सभी को रचनात्मक व तार्किक प्रतिक्रियाएँ देने के लिए भी तत्पर रहना पड़ता है।

कब किस बात से पीछे हटना है और किस बात के आगे डटना है, यह महत्वपूर्ण नेतृत्व कौशल है। कुशल नेतृत्वकर्ता बखूबी जानता है कि किसकी क्या खूबियाँ हैं और सभी पर भरोसा भी रखता है। ऐसी स्थिति में वह विचार तो सभी के सुनता है, लेकिन उसी विचार को आगे बढ़ाता है, जो संगठन के तात्कालिक व दूरगामी हितों के

लिए बेहतर होता है। चूँकि आप सभी के साथ समान व्यवहार करते हैं और सभी पर भरोसा भी रखते हैं, इसीलिए जिनके विचारों को आपने फिलहाल आगे नहीं बढ़ाया है, वे अपनी उम्मीदें नहीं छोड़ते हैं और ज्यादा मन लगाकर काम करते हैं। इस तरह, कार्यदल के साथियों के बीच आपसी प्रतिस्पर्धा व भाईचारा का संतुलन कायम रहता है और लगातार बेहतर नतीजे मिलते हैं।

- **मनोबल बनाए रखें**

ध्यान रहे कि चूँकि कार्यदल के सभी सदस्यों की नजर आप पर ही होती है; इसीलिए आप स्वयं को ही उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करें। यदि आपने कार्यदल की गतिविधियों से खुद को अगल-थलग रखने की कोशिश की या फिर अनुत्साहित दिखे तो यह कार्यदल के प्रदर्शन में साफ दिखाई देगा। जी हाँ, कार्यदल के हर काम में आपको घुसना पड़ेगा और साथियों में यह भरोसा पैदा करना पड़ेगा कि आप उस काम को पूरा करने के लिए कृतसंकल्प हैं, विशेष रूप से जब कार्यदल बहुत कम समय-सीमा में किसी मुश्किल लक्ष्य को साधने में जुटा हुआ हो। इसका मतलब यह नहीं होता है कि आप उनके रोजाना के काम-काज में खुद को उलझाएँ, बल्कि इसका मतलब यह होता है कि आप अपने कार्यदल के दबावों, परेशानियों व जरूरतों के प्रति संवेदनशील रहें। अपने साथियों को इस संवेदनशीलता का एहसास कराने के लिए आपको उनमें से हरेक की व्यक्तिगत समस्याओं को जानने के लिए समय निकलना पड़ेगा और यथासंभव मदद भी करनी पड़ेगी। इस तरह आप यह भी समझ पाएँगे कि वे किन बातों से प्रोत्साहित होते हैं और किनसे नहीं? आप अपनी इस समझदारी का उपयोग व्यक्तिगत उपलब्धियों को पहचानने व पुरस्कृत करने के लिए कर सकते हैं। कार्य-प्रदर्शन को पुरस्कृत करने के लिए कई तरीके हैं और उनसे कुछ बेहतरीन तरीके ऐसे हैं, जिनमें कोई लागत भी नहीं आती।

ध्यान रहे कि प्रभावी मार्गदर्शन के बिना कार्यदल व व्यक्ति-विशेष अकसर खुद को लक्ष्य से अलग-थलग कर लेते हैं, अपनी जिम्मेदारी की उपेक्षा करने लगते हैं और बहुत बार खुद को उन्हीं पुराने कार्यों में उलझाए रखते हैं। नतीजा यह होता है कि कार्यदल किसी विशेष उपलब्धि को हासिल नहीं कर पाता। इसीलिए, कुशल व प्रभावी नेतृत्वकर्ता की सबसे बड़ी जिम्मेदारी यही होती है कि वह अपने कार्यदल के सभी सदस्यों के मनोबल को बढ़ाने की कोशिश करे।

- **अपनी जिम्मेदारी की सराहना करें**

प्रभावी कार्यदल-नेतृत्वकर्ता अपनी भूमिका की जिम्मेदारी की सराहना करता है और उसकी जरूरतों के मुताबिक समय-समय पर कड़े फैसले करने से हिचकता नहीं है। कार्य-प्रदर्शन को प्रबंधित करते हुए या आपसी झगड़ों व मनमुटाव की समस्याओं से निपटते हुए, नेतृत्वकर्ता को पहले से ही ऐसी रणनीति तैयार रखनी पड़ती है जिससे जरूरत पड़ने पर वह मुद्दों को बारीकी से समझ सके और संतुलन बनाने के लिए तेजी से टिकाऊ समाधान निकालने की सौदेबाजी कर सके।

इसके साथ ही, प्रभावी नेतृत्वकर्ता को रचनात्मकता को बढ़ावा देने के लिए, व्यक्ति-विशेषों को कार्य-प्रदर्शन में सुधार लाने के लिए मदद करने के लिए और उच्च परिणाम देने के लिए, आपसी सहयोग का समर्थन करने के लिए लोगों को एक साथ लाने की जरूरत है और ऐसा करने के लिए नेतृत्वकर्ता को कई बार कड़े रुख भी अपनाने पड़ते हैं।

- **आत्मनिर्भरता का लक्ष्य बनाएँ**

प्रभावी नेतृत्वकर्ता अपने कार्यदल को आत्मनिर्भर बनाने का लक्ष्य भी निर्धारित करता है। वह अपने कार्यदल को

लक्ष्य-प्राप्ति के लिए सहयोगी कार्यदलों के साथ मिलकर काम करने के लिए इस तरह तैयार करता है कि वे छोटी-मोटी समस्याओं को आपसी विचार-विमर्श से ही सुलझाने लगते हैं। जब कार्यदल के सदस्य अपनी जिम्मेदारियों के साथ-साथ दूसरे की खूबियों व कमियों को भी जानने-समझने लगते हैं और उन्हें सामूहिक गतिविज्ञान (टीम डायनामिक्स) के स्वाभाविक हिस्से के रूप में स्वीकार करने लगते हैं, तब उनकी देख-रेख करने की जरूरत लगभग खत्म-सी हो जाती है, लेकिन तब भी समय-समय पर उन्हें यह एहसास दिलाने की जरूरत पड़ती है कि सामूहिक कार्य-प्रदर्शन के साथ-साथ उन्हें गंभीरता के साथ व्यक्तिगत भूमिकाएँ भी निभानी हैं।

अध्याय-3

सामूहिक कार्य का जादू

“आप अपने दम पर आगे दौड़ने की कोशिश कर या अपने साथियों के साथ प्रतिस्पर्धा कर एवरेस्ट जैसे पर्वत पर चढ़ नहीं सकते हैं। आप निस्स्वार्थ सामूहिक कार्य (टीम वर्क) द्वारा धीरे-धीरे व सावधानीपूर्वक ऐसा करते हैं। निश्चित रूप से मैं अपने आपसे शीर्ष तक पहुँचना चाहता था; यही एक बात थी, जिसका मैंने अपने सारे जीवन में सपना देखा था, लेकिन अगर सौभाग्य किसी और की झोली में पड़े, तो मैं इसे पुरुष की तरह स्वीकार करूँगा, न कि रोते हुए बच्चे की तरह—पर्वत यही सिखाता है।”

—तेनजिंग नॉर्गे

तेनजिंग नॉर्गे को कौन नहीं जानता? हाँ, अधिकतर लोग तो यही जानते हैं कि वह नेपाली पर्वतारोही था, जिसने न्यूजीलैंड के एडमंड हिलेरी के साथ 29 मई, 1953 को विश्व की सबसे ऊँची चोटी ‘माउंट एवरेस्ट’ पर पहला मानव कदम रखा था। इस कथन से तो यही लगता है कि यह सिर्फ दो लोगों की अतिमानवीय कोशिशों का ही नतीजा था, लेकिन यह जानकर आप हैरान हो सकते हैं कि 1953 के ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान दल में करीब 400 लोग शामिल थे। ब्रिगेडियर हेनरी सेसिल जॉन हंट के नेतृत्व में आयोजित उस अभियान में हंट व एडमंड हिलेरी सहित 13 ब्रिटिश पर्वतारोही शामिल थे। इस दल की तकनीकी सहायता के लिए तेनजिंग नॉर्गे के नेतृत्व में 20 अनुभवी शेरपाओं का विशेष मार्गदर्शक दल नियुक्त किया गया था। इनके पीछे स्थानीय समुदाय के 360 से अधिक लोग चल रहे थे, जिनकी पीठों पर कुल 4.5 टन से भी अधिक जरूरी सामग्रियाँ लदी हुई थीं। कुल मिलाकर यह सैन्य शैली में आयोजित भारी-भरकम अभियान था।

तभी तो तेनजिंग नॉर्गे कहते हैं कि आप निस्स्वार्थ सामूहिक कार्य (टीम वर्क) द्वारा ही एवरेस्ट जैसे पर्वत पर चढ़ सकते हैं, अकेले अपने दम पर या अपने साथियों के साथ प्रतिस्पर्धा करके नहीं। हाँ, तेनजिंग नॉर्गे ने अपने उपरोक्त कथन में सामूहिक कार्य के बारे में यह दार्शनिक तथ्य भी पेश किया है कि सफलता का सेहरा किसके सिर बँधता है, यह कार्यदल (टीम) का कोई सदस्य तय नहीं कर सकता; यह किसी की झोली में भी गिर सकता था और बाकी साथियों को इस मर्दानगी से स्वीकार करना चाहिए। तेनजिंग नॉर्गे ने तो ऐसा ही किया था। एवरेस्ट शिखर विजय की जो ऐतिहासिक तस्वीर दुनिया भर के अखबारों में छपी थी, वह तेनजिंग नॉर्गे की थी, जिसे एडमंड हिलेरी ने खींचा था। बाद में जब विवाद हुआ कि किसने एवरेस्ट की चोटी पर कदम रखा था, तो ब्रिगेडियर जॉन हंट ने मामले को शांत करने के लिए कह दिया था, “दोनों ने एक साथ”।

लेकिन, तेनजिंग नॉर्गे व एडमंड हिलेरी में यह महत्वपूर्ण नहीं था कौन सबसे पहले एवरेस्ट पर कदम रखे, क्योंकि वे मौत से भीषण संघर्ष करते हुए वहाँ तक पहुँच सके थे। बाद में, तेनजिंग नॉर्गे ने ही स्पष्ट किया था कि पहला कदम एडमंड हिलेरी ने रखा था और इस कथन ने एडमंड हिलेरी के कद को और ऊँचा उठा दिया था; यदि उसके मन में तनिक भी ईर्ष्या होती तो वह तेनजिंग नॉर्गे की ही तस्वीर क्यों लेता? इससे क्या शिक्षा मिलती है? वही, जो तेनजिंग नॉर्गे ने अपने दार्शनिक वाक्यों में कहा है। जी हाँ, एवरेस्ट पर चढ़ने जैसी महानतम सफलता हासिल करनी है तो यह सामूहिक कार्य से ही संभव है, व्यक्तिगत अहं को हवा देकर नहीं।

तेनजिंग नॉरगे ने इसे 'पर्वत की शिक्षा' क्यों कहा है? क्योंकि वह इससे पहले भी कई एवरेस्ट विजय अभियानों में शामिल था, लेकिन सफलता 1953 में मिली और वह भी एडमंड हिलेरी के साथ! तो सफलता सपने के पूरे होने में नहीं, बल्कि सपने को पूरे करने के लिए जी-जान की बाजी लगा देने में है। यही तो गीता का 'कर्मवाद' दर्शन है। तेनजिंग नॉरगे ने हमेशा खुद को पर्वतारोही माना था; उसने हमेशा निस्स्वार्थ भाव से बिना फल की चिंता किए अपना कर्म जारी रखा था; एवरेस्ट का विजेता हो जाना तो उसका प्रारब्ध (डेस्टिनी) था, लेकिन इस कर्मवाद से उसे नई सीख मिली थी कि महान् सफलता का रहस्य निस्स्वार्थ सामूहिक कार्य-भावना (सेल्फलेस टीम वर्क स्पिरिट) ही है।

विश्व की सबसे ऊँची चोटी की खोज

सदियों से हिमालय पर्वत श्रृंखला की सबसे ऊँची चोटी को भारतीय संस्कृत साहित्य में 'देवगिरि' (देवताओं का पर्वत) और तिब्बती लोककथाओं में 'चोमोलुंगमा' (बर्फ की देवी माँ) कहा जाता रहा था। उस शिखर पर चढ़ने की तो कोई सोच भी नहीं सकता था, क्योंकि उसकी खोज भी सदियों तक आधुनिक मानव समुदाय के लिए बहुत बड़ी चुनौती बनी रही थी। इसकी खोज भी सिर्फ दो सदी पहले 1806 में शुरू हो सकी थी, लेकिन विडंबना यह है कि करीब आधी सदी की जद्दोजहद के बाद, जब 1852 में हिमालय की सबसे ऊँची चोटी के रूप में उसकी पहचान निश्चित हो सकी तो उसे कोई पारंपरिक नाम देने की बजाय 'चोटी-15' कहा गया। चौंकिए मत, इस असंभव माने जानेवाले कार्य को भारतीय गणितज्ञ राधानाथ सिकंदर ने संभव किया था। उसने सर्वेक्षण उपकरण 'थीओडोलाइट' की सहायता से 150 मील दूर (त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण मुख्यालय, देहरादून) से हिमालय की इस चोटी को समुद्रतल से 29,000 फीट (8839 मीटर) ऊँचा बताया था। तत्कालीन भारत के महा-सर्वेक्षक (सर्वेयर जनरल ऑफ इंडिया) एंड्रयू स्कॉट वॉ ने इस सूचना को दबाए रखा था और 1956 में जब अन्य चोटियों को मापने का काम भी पूरा हो गया था, तब कलकत्ता मुख्यालय से इसकी घोषणा की थी। शुरू में कर्नल जॉर्ज एवरेस्ट ने विश्व की सबसे ऊँची चोटी को स्थानीय नाम देने का सुझाव दिया था। अंततः 1865 में, एंड्रयू स्कॉट वॉ ने कर्नल जॉर्ज एवरेस्ट (तब रॉयल जियोग्राफिकल सोसाइटी का उपाध्यक्ष) के सम्मान में अंग्रेजी नाम 'माउंट एवरेस्ट' दे दिया।

असल में, 1800 में टीपू सुल्तान को हराकर मैसूर साम्राज्य पर कब्जा करने के बाद, ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1802 में समूचे भारतीय उपमहाद्वीप को वैज्ञानिक परिशुद्धता के साथ मापने के उद्देश्य से 'महान् त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण' (ग्रेट ट्रिगोनोमेट्रिकल सर्वे) परियोजना का आयोजन किया था, जिसका नेतृत्व ब्रिटिश सेनाधिकारी लेफ्टिनेंट कर्नल विलियम लैंबटन ने किया था। रॉयल आर्टिलरी के गठन के बाद, 1818 में लेफ्टिनेंट कर्नल जॉर्ज एवरेस्ट को कर्नल विलियम लैंबटन का सहायक नियुक्त किया गया था। 1823 में कर्नल लैंबटन की मृत्यु के बाद जॉर्ज एवरेस्ट ने 'महान् त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण' के काम-काज को आगे बढ़ाया था। फिर 1830 में पहला 'सर्वेयर जनरल ऑफ इंडिया' नियुक्त किए जाने के बाद जॉर्ज एवरेस्ट ने हिमालय की पर्वत श्रेणियों के सर्वेक्षण के काम को तेजी से आगे बढ़ाना शुरू किया था।

1831 में जॉर्ज एवरेस्ट गोलीय त्रिकोणमिति (स्फेरिकल ट्रिगोनोमेट्री) में विशेष दक्षतावाले प्रतिभाशाली युवा गणितज्ञ की खोज कर रहा था। तब हिंदू कॉलेज (अब प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता) में प्रसिद्ध गणित प्राध्यापक प्रो. जॉन टाइटलर ने जॉर्ज एवरेस्ट को अपने प्रिय शिष्य राधानाथ सिकंदर (जन्म: अक्टूबर 1813; जोड़ासांको, कलकत्ता) का नाम सुझाया था। कुछ समय कलकत्ता मुख्यालय में काम करने के बाद राधानाथ ने

देहरादून सर्किल में जॉर्ज एवरेस्ट के साथ काम शुरू किए था। राधानाथ की ही मदद से जॉर्ज एवरेस्ट ने बिदार (हैदराबाद) से पांडो (मसूरी) के बीच 870 मील (1400 कि.मी.) लंबा सर्वेक्षण किया था। 1943 में जॉर्ज एवरेस्ट की सेवानिवृत्ति के बाद एंड्रयू स्कॉट वॉ ने उसकी जिम्मेदारी सँभाली थी, जिसे 1951 में राधानाथ सिकंदर को मुख्य अभिकलक (चीफ कंप्यूटर) पदोन्नत कर कलकत्ता मुख्यालय बुला लिया था और उसे हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं की गणना का काम सौंपा था।

वह ब्रिटिश सरकार के अधिनायकवाद का दौर था, शायद इसीलिए राधानाथ सिकंदर को वह मान्यता नहीं मिली, जिसका वह हकदार था और हिमालय की सबसे ऊँची चोटी का सदियों पुराना नाम भी छिन गया, लेकिन इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि इस चोटी की खोज भी मानवीय प्रयासों की बहुत बड़ी उपलब्धि थी। वह काम भी उतना ही श्रमसाध्य, जटिल व चुनौतीपूर्ण था, जितना कि करीब एक सदी बीत जाने के बाद उस पर चढ़ने का काम साबित हुआ था। इन दोनों प्रयासों में भीषण शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक व तकनीकी बाधाओं का सामना करना पड़ा था। ये दोनों ही प्रयास असंभव को संभव कर दिखाने के अभियान थे, जो सामूहिक कार्य के बिना सोचे भी नहीं जा सकते थे। इसीलिए एवरेस्ट की कहानी उसकी खोज व उस पर चढ़ाई, दोनों की कहानियाँ हैं और दोनों ही सामूहिक मानवीय प्रयासों के अद्भुत उदाहरण भी हैं।

याद रहे कि 'महान् त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण' के तत्त्वावधान में भारतीय महाद्वीप को वैज्ञानिक परिशुद्धता के साथ मापना धीमी व कठिन प्रक्रिया थी। यह विश्व के समूचे वैज्ञानिक इतिहास के सबसे अद्भुत कार्यों में से एक गिना जाता है। इसीलिए अभियान को महान् कहा जाता है। भारत की पहली खगोलीय वेधशाला 'मद्रास ऑब्जर्वेटरी' (ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा 1786 में स्थापित) से 1802 में शुरू हुए इस सर्वेक्षण अभियान को हिमालय तक पहुँचने में 40 वर्ष लग गए थे। इस महाभियान ने पूर्व कंप्यूटर युग में सबसे जटिल गणितीय समीकरणों को पैदा किया था; उसमें समकालीन भारतीय युद्धों की तुलना में सबसे अधिक जानें भी गई थीं और सबसे अधिक धन भी खर्च हुआ था। मलेरिया व अन्य विकृतियों ने पूरे-पूरे सर्वेक्षण दलों का सफाया कर दिया था; अनगिनत कुलियों को बाघों का भोजन बनना पड़ा था; और दुर्गम पहाड़ियों में दृष्टि-रेखा (लाइन ऑफ साइट) की स्थापना की जरूरतों को पूरा करने के लिए बाँस मचानों के ऊपर झंडा उठानेवाले अनगिनत लोग नीचे गिरकर मौत की गोद में चले गए थे।

इस महाभियान के नेतृत्वकर्ता लेफ्टिनेंट कर्नल विलियम लैंबटन 20 वर्षों बाद भी अभी अपने लक्ष्य की आधी दूरी पर ही पहुँच सका था कि 1923 में हिंणघाट (वर्धा, महाराष्ट्र) में उसकी भी मौत हो गई थी और उसे वहीं पर दफना दिया गया था। उसका उत्तराधिकारी कर्नल जॉर्ज एवरेस्ट भी काफी पहले से ही मलेरिया व दस्त से जूझता चला आ रहा था। काम सँभालने के बाद तो उसकी हालत और भी बिगड़ती चली गई थी। अगले दो दशकों की महाभियान के दौरान वह अस्थायी अंधापन का शिकार हुआ; कई बार लकवे का आक्रमण झेला और उसे कई बार प्रामाणिक पागलपन के दौर भी आए। एवरेस्ट विश्व की सबसे ऊँची चोटी को खुद अपनी आँखों से नहीं देख सका था, लेकिन 1943 में जब वह सेवानिवृत्ति लेकर इंग्लैंड वापस चला गया था, तब तक भारतीय महाद्वीप की रीढ़ को आर-पार नापने का महाभियान देहरादून तक पहुँचकर लगभग पूरा हो चुका था और हिमालय को मापने का अभियान पूरब व पश्चिम की ओर बढ़ाया जा रहा था।

एवरेस्ट पर चढ़ना जरूरी क्यों था?

अब सहज ही यह जिज्ञासा होती है कि आखिर एवरेस्ट की खोज और उस पर चढ़ना जरूरी क्यों था? जॉर्ज

हर्बर्ट लेह मैलोरी ने इस प्रश्न का बहुत ही रोचक जवाब दिया था, “क्योंकि वह (एवरेस्ट) वहाँ था।” मैलोरी ने 1921, 1922 व 1924 की तीन ब्रिटिश एवरेस्ट अभियानों का नेतृत्व किया था। 1924 के अभियान में मैलोरी अपने साथी पर्वतारोही एंड्रयू ‘सैंडी’ इरविन सहित पहली बार एवरेस्ट के सबसे नजदीक तक पहुँच गया था, लेकिन अंतिम कोशिश के दौरान वे उत्तर-पूर्वी चोटी पर गायब हो गए थे। उस जोड़ी को अंतिम बार तब देखा गया था, जब वे सर्वोच्च शिखर से 800 फीट (245 मीटर) नीचे थे। मैलोरी व उसके साथी के साथ भाग्य ने अंतिम खेल क्या खेला था, इसके बारे में भी दुनिया अगले 75 सालों तक अनजान ही रही थी, जब विशेष अभियान दल ने 1 मई, 1999 को उनका अवशेष खोज निकाला था। मैलोरी व इरविन शिखर पर पहुँच सके थे या उससे पहले ही दम तोड़ दिया था, इसके बारे में अभी अटकलें लगाई जा रही हैं और वह सतत अनुसंधान का विषय बनी हुई है।

मैलोरी को इससे कोई मतलब नहीं था कि एवरेस्ट वहाँ पर क्यों था और उसे ‘एवरेस्ट’ ही क्यों कहा गया था? वास्तव में, एवरेस्ट की भव्य ऊँचाई और पृथ्वी पर सबसे ऊँची हिमालय पर्वत श्रृंखलाएँ उस आश्चर्यजनक रूप से शक्तिशाली भूगर्भीक शक्ति (जियोलॉजिक फोर्स) की विवर्तनिक कार्रवाई (टेक्टोनिक एक्शन) का नतीजा हैं, जो महाद्वीपीय भूभागों को एक-दूसरे के विरुद्ध चलाती रहती है। यही भूगर्भीक शक्ति भारतीय भूभाग पर एशियाई भूभाग से टकराने का दबाव बनाती रहती है और उन दोनों के बीच में समूची हिमालय पर्वतमाला को ऊपर की ओर धकेलती रहती है। यह निर्दयतापूर्ण भूगर्भीक प्रक्रिया आज तक भी लगातार जारी है और हर वर्ष समूची हिमालय पर्वतमाला को कई मिलीमीटर ऊपर उठा देती है। वास्तव में, हिमालय की पर्वतमालाओं की बेहद जटिल उलझन है, जो पृथ्वी की सतह पर सबसे ताकतवर भौगोलिक विशेषता को प्रदर्शित करती है।

जी हाँ, हिमालय 1,500 मील (2,400 किलोमीटर) लंबी पर्वत श्रृंखला है। इसका पश्चिमी छोर नंगा पर्वत है, जो सिंधु नदी के सबसे उत्तरी मोड़ के दक्षिण में स्थित है; और पूर्वी छोर नमचा बरवा पर्वत है, जो त्संगपो नदी की मोड़ पर स्थित है। इस श्रृंखला की चौड़ाई पश्चिम में 250 मील (400 किलोमीटर) और पूर्व में 93 मील (150 किलोमीटर) के बीच बदलती हुई है। इस पर्वत श्रृंखला में 100 से अधिक ऐसी चोटियाँ हैं, जिनकी ऊँचाई समुद्रतल से 24,000 फीट (7315 मीटर) ऊपर है और उनमें कम-से-कम 20 चोटियों की ऊँचाई 26,000 फीट (7925 मीटर) से ऊपर है, जो विश्व की किसी भी अन्य पर्वतों से ऊँची हैं। चाँद से देखने पर हमारे पृथ्वी गृह के चेहरे पर भौंह की तरह लगती हैं।

यह एशिया का ‘ग्रेट बैरियर रिज’ (महान् नाका पर्वतमाला) है, तो भारत के लिए ‘चीन की महान् दीवार’। दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप को परिभाषित करनेवाली इसकी चोटियाँ बादलों को रोकती हैं और जलवायु क्षेत्रों, लोगों व जीवन शैलियों में अंतर पैदा करती हैं। दक्षिण एशिया के मानसून को खदेड़कर यह पर्वतमाला भीतरी एशिया को भारत जैसी हरियाली के आनंद से वंचित रखती है और उसे तापमान व शुष्कता के चरम झेलने के लिए मजबूर करती है। इस पर्वतमाला के ठीक उत्तर में पेड़ दुर्लभ हैं और वहाँ के लोग (मंगोल) मुख्य रूप से चरवाहे हैं; लेकिन दक्षिण में इसकी ढलानें हरे वनों से भरी हुई हैं और वहाँ के लोग (आर्य) मुख्य रूप से किसान व फसल उत्पादक रहे हैं। इस तरह, जलवायु नाका व आक्रमणकारियों के लिए किले की दीवार बनकर हिमालय एशिया की जीवन-रक्षक प्रणाली (लाइफ-सपोर्ट सिस्टम) को भी नियंत्रण करता है। हिमालय की गोद में बैठी, तिब्बती पठार के दक्षिण व पूर्व से उतरती हुई, दुनिया की 10 सबसे बड़ी नदियाँ हिंद महासागर व चीन सागर की तरफ बढ़ रही हैं। सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र, इरावती, मेकोंग, चांग आदि इन नदियों के तटों पर ही एशिया की सभ्यताएँ पालित-पोषित होती रही हैं। इन नदियों की बाढ़ के पानी पर दुनिया की आधी आबादी अभी भी निर्भर करती है।

इस पर्वतमाला का दिल उस चोटी के आसपास धड़कता है, जिसे हम एवरेस्ट के रूप में जानते हैं। हालाँकि

एवरेस्ट हमेशा से वहीं पर रहा था, लेकिन बहुत लंबे समय तक उसे अपनी पहचान नहीं मिली थी। आधुनिक मानवजाति अपनी अन्वेषण सूची में इसे हमेशा अंतिम स्थान पर ही रखती रही थी, क्योंकि यह अन्य सभी स्थलीय चुनौतियों में सबसे मुश्किल व आखिरी चुनौती थी। 19वीं सदी के मध्य तक दुनिया के मानचित्र निर्माताओं के लिए यह चोटी अनजान बनी रही थी। अंततः जब 1852 में इसकी अवस्थिति व ऊँचाई का सही अनुमान लगाया गया, तो यह विश्व-चेतना के लिए असाधारण वैज्ञानिक महाकाव्य जैसा ही था; क्योंकि यह विश्व के सबसे ऊँचे बिंदु के रूप में अब तक अप्राप्त संपत्ति रही थी; और यह एक ऐसा स्थान था, जो पृथ्वी ग्रह के अन्य स्थानों की तुलना में तारों से सबसे नजदीक था, तो फिर दुनिया इसकी दीवानी क्यों न होती?

रास्ता ढूँढ़ने की शुरुआती कोशिशें

वैसे तो जब 1856 में ही विश्व की सबसे ऊँची चोटी को 'पीक-15' के रूप में पहचान मिल गई थी और 1865 में उसे माउंट एवरेस्ट नाम भी दे दिया गया था, लेकिन उस पर विजय प्राप्त करने की कोशिशें शुरू होने में करीब पाँच दशक और बीत गए थे। इस बीच, 1857 में लंदन में विश्व की पहली पर्वतारोहण मंडली 'अल्पाइन क्लब' की स्थापना हो चुकी थी; और 1885 में उसके अध्यक्ष क्लिंटन थॉमस डेंट ने अपनी पुस्तक 'एबव द स्नो लाइन' में माउंट एवरेस्ट पर चढ़ने का सुझाव भी दिया था, लेकिन तीन दशकों बाद, जनवरी 1921 में अल्पाइन क्लब व रॉयल जियोग्राफिकल सोसाइटी ने संयुक्त रूप से 'माउंट एवरेस्ट कमेटी' गठन कर एवरेस्ट चढ़ाई अभियान का खर्च उठाने और उसकी गतिविधियों को संयोजित करने का फैसला किया था। इस तरह, पहली आधिकारिक कोशिश की शुरुआत 1921 की 'ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट टोही अभियान' से हुई थी।

जैसा कि इस नाम से ही साफ होता है, यह टोही अभियान था, जो गंभीर चढ़ाई के लिए जरूरी साजो-सामान से लैस नहीं था। चूँकि उस समय राजनीतिक कारणों से नेपाल के रास्ते हिमालय की चढ़ाई की अनुमति नहीं मिली थी, इसीलिए वह अभियान सिक्किम होते हुए तिब्बत के उत्तरी मार्ग से शुरू हो सका था। फिर भी, इस अभियान का नेतृत्वकर्ता जॉर्ज हर्बर्ट लेह मैलोरी अपनी साथी पर्वतारोही हेनरी बुलक के साथ 22,982 फीट (7005 मीटर) पर नॉर्थ कोल तक चढ़ने में कामयाब रहे थे। इस तरह वे दोनों माउंट एवरेस्ट के किनारों को छूनेवाले पहले यूरोपीय पर्वतारोही बन गए थे। हालाँकि मैलोरी ने शीर्ष तक पहुँचनेवाले मार्ग का रहस्य भी खोज लिया था, लेकिन वह अभियान आगे की चढ़ाई के महान् कार्य के लिए तैयार नहीं था और वे लोग नीचे उतर गए थे।

1922 का 'ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान' विश्व की सबसे ऊँची चोटी पर चढ़ने की पहली गंभीर कोशिश साबित हुआ था। यह पहला अभियान था, जब ऑक्सीजन बोतल के साथ एवरेस्ट पर चढ़ने की कोशिश की गई थी। चार्ल्स ग्रानविले ब्रूस के नेतृत्व में तिब्बत के आजमाए हुए रास्ते से यह अभियान शुरू हुआ था। 13 सदस्यों के लिए जरूरी सामानों को ढोने के लिए 160 तिब्बती कुलियों की सहायता ली गई थी। ऑस्ट्रेलियाई रसायनज्ञ व पर्वतारोही जॉर्ज इंग्ले फिंच ने अपनी पीठ पर ऑक्सीजन सिलिंडर रखकर 951 फीट (290 मीटर) प्रति घंटा की उल्लेखनीय गति से चढ़ाई की थी और 27,300 फीट (8,320 मीटर) की ऊँचाई पर पहुँचकर नया कीर्तिमान स्थापित किया था। इसके बाद, जॉर्ज हर्बर्ट लेह मैलोरी ने इससे ऊपर जाने की तीन असफल कोशिशें की थीं। अंतिम कोशिश के दौरान मैलोरी के दल को भयानक हिमस्खलन का सामना करना पड़ा था, जिसमें सात कुलियों की मौत हो गई थी। मैलोरी को भी मरणासन्न हालत में आधार शिविर (बेस कैम्प) तक लाया जा सका था, लेकिन जैसा कि हम ऊपर पढ़ चुके हैं, 1924 के 'ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान' में मैलोरी न तो अपनी जान बचा सका था और न अपने साथी की।

तेनजिंग नॉरगे की बढ़ती भूमिकाएँ

इसके 8 वर्षों बाद 1933 में, 13वें दलाई लामा ने 'ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान' को तिब्बत के रास्ते अपने चौथे अभियान पर जाने की अनुमति दी थी, लेकिन विभिन्न अव्यवस्थाओं के चलते यह अभियान बुरी तरह असफल साबित हुआ था, लेकिन इस अभियान दल के बाकी सदस्यों से अलग एरिक अर्ल शिप्टन व लॉरेंस रिक्कार्ड वेजर ने बिल्कुल नए रास्ते से सिक्किम की तरफ रवाना हुए थे। यही कारण था कि 1934 में एरिक अर्ल शिप्टन व हेरोल्ड विलियम 'बिल' टिलमैन तीन विशेषज्ञ शेरपाओं की मदद से नंदा देवी पर्वत पर पहुँच पाने में सफल रहे थे। अगले वर्ष 1935 में एरिक अर्ल शिप्टन ने ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट टोही अभियान का नेतृत्व किया था, जिसमें उसने 20 वर्ष के युवा शेरपा तेनजिंग नॉरगे को पर्वतारोहण का पहला मौका दिया था। इस अभियान दल को 20,000 फीट (6100 मीटर) से ऊँची 26 चोटियों पर चढ़ने में सफलता मिली थी, जो अब तक के सभी अभियानों की संयुक्त उपलब्धियों से भी ज्यादा थी। इनमें से 24 बिल्कुल नई चोटियाँ थीं। तेनजिंग नॉरगे को 1936 के ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान में भी शामिल होने का मौका मिला था, जिसमें उसके सहित कुल 60 शेरपाओं की भरती की गई थी, लेकिन यह अभियान बुरी तरह असफल रहा था।

द्वितीय विश्वयुद्ध (1939-45) के बाद भी कुछ समय तक एवरेस्ट पर चढ़ाई का अभियान बिल्कुल थमा रहा था। इस बीच तेनजिंग नॉरगे ने चित्राल रियासत (विभाजन के बाद पाकिस्तान का हिस्सा) में सैन्य अधिकारी के पास नौकरी की थी। यहीं उसकी पहली पत्नी की मौत हो गई थी और विभाजन के बाद वह अपनी दो बेटियों के साथ दार्जिलिंग वापस आ गया था। फिर उसने कनाडाई मूल के शौकिया पर्वतारोही अर्ल डेनमैन के साथ एवरेस्ट पर चढ़ाई की असफल कोशिश की थी। वह डेनमैन व अंगे दावा शेरपा के साथ तिब्बत में अवैध रूप से घुसकर 22,000 फीट (6700 मीटर) की ऊँचाई तक पहुँच गया था, लेकिन उसके बाद जब वे लोग बर्फ के भारी तूफान में फँस गए थे तो डेनमैन ने हार मान ली और तीनों वापस आ गए थे।

1947 में ही तेनजिंग नॉरगे को पहली बार स्विस अभियान में शेरपाओं का सरदार भी बनने का अवसर मिला था। उसे यह अवसर पुरस्कार के रूप दिया गया था। असल में, उस चढ़ाई के दौरान सरदार वांगडी नोरबू गिर पड़ा था और गंभीर रूप से घायल हो गया था, लेकिन नॉरगे ने जान पर खेलकर उसका बचाव किया था। वह अभियान पश्चिमी गढ़वाल हिमालय में 22,769 फीट (6940 मीटर) की ऊँचाई पर केदारनाथ की मुख्य चोटी तक पहुँच पाने में कामयाब रहा था।

1950 में चीन द्वारा तिब्बत पर कब्जा किए जाने के बाद, नेपाल के रास्ते से एवरेस्ट पर चढ़ने की कोशिशें शुरू हुई थीं। 1950 व 1951 में क्रमशः अमेरिकी व ब्रिटिश टोही अभियान दलों ने नेपाल में दक्षिण-पूर्वी हिमालय से संभावित मार्गों का निरीक्षण किया था। 1952 में स्विस अभियान के तहत वसंत व शरद ऋतुओं में उसी दक्षिण-पूर्वी हिमालय मार्ग से एवरेस्ट पर चढ़ने की पहली दो गंभीर कोशिशें की गई थीं। इन दोनों अभियानों में तेनजिंग नॉरगे ने सरदार के रूप में विशेषज्ञ शेरपाओं सहित कुलियों के दल को संगठित किया था। इस अभियान में नॉरगे को पहली बार मुख्य पर्वतारोही दल का सदस्य बनाया गया था, जिसे उसने बाद के साक्षात्कारों में अपने जीवन की पहली सबसे बड़ी उपलब्धि बताया था। 28 मई, 1952 को नॉरगे व रेमंड लैंबर्ट ने 28,200 फीट (8,600 मीटर) पर पहुँच जाने का नया कीर्तिमान स्थापित किया था और एवरेस्ट पर अंतिम विजय का रास्ता भी खोल दिया था। उसी दौरान नॉरगे व रेमंड लैंबर्ट के बीच आजीवन चलनेवाली गहरी दोस्ती कायम हो गई थी। शरदकालीन अभियान में 26,575 फीट (8,100 मीटर) की ऊँचाई तक पहुँचने के बाद मौसम गड़बड़ा गया था और अभियान दल को वापस लौटना पड़ा था।

सामूहिक कार्य ने एवरेस्ट को जीता

अब तक तेनजिंग नॉर्गे शेरपा सरदार के रूप में अपनी काबिलीयत की धूम मचा चुका था। यही कारण था कि 1953 में कर्नल जॉन हंट के नेतृत्व में आयोजित ब्रिटिश माउंट एवरेस्ट अभियान में तेनजिंग नॉर्गे को सरदार नियुक्त किया गया था। यह एवरेस्ट विजय का 11वाँ, ब्रिटिश दल का 9वाँ और तेनजिंग नॉर्गे का 7वाँ अभियान था। जैसा कि हम इस अध्याय के शुरू में पढ़ चुके हैं, नॉर्गे ने इस अभियान की सफलता को सुनिश्चित करने के लिए 20 बेहद अनुभवी शेरपाओं का विशेषज्ञ दल तैयार किया था और कुल 4.5 टन से भी अधिक सामग्रियों को ढोने के लिए 360 कुलियों को भी संगठित किया था। अब तक के अन्य अभियानों की तुलना में यह सबसे अधिक संगठित अभियान था, जिसमें सामूहिक कार्य का अद्भुत प्रदर्शन हुआ था।

एवरेस्ट की चोटी उसके ठीक दक्षिण में हिमनदियाँ व बर्फ के झरनों से घिरी हुई हैं, जिसे 1921 के टोही अभियान में जॉर्ज मैलोरी ने देखा था और उसे 'वेस्टर्न सीडब्लूएम' यानी 'पश्चिमी खाई' नाम दिया था। यह धीरे-धीरे लहराते हिमनदों की विशाल कटोरा घाटी है, जो एवरेस्ट को दक्षिण-पूर्व में 27,940 फीट (8516 मीटर) ऊँचे पर्वत ल्होत्से (यानी दक्षिणी चोटी) व दक्षिण-पश्चिम में 25,791 फीट (7861 मीटर) ऊँचे पर्वत नुप्त्से (यानी पश्चिमी चोटी) से जोड़ती है। ल्होत्से व एवरेस्ट के मुख्य हिस्से के बीच में 'वेस्टर्न सीडब्लूएम' के ऊपर 25,938 फीट (7906 मीटर) की ऊँचाई पर 'साउथ कोल' (दक्षिणी दर्रा) स्थित है। यहाँ तक पहुँचने के लिए अभियान दल को खतरनाक बर्फ-पिंडों से होकर गुजरना पड़ता है। इसके नीचे कभी भी अचानक अत्यंत गहरी हिम दरारों के खुल जाने की आशंका बनी रहती है। कभी भी हिमस्खलन शुरू कर देनेवाले इन ढीले बर्फ-पिंडों को उड़ाने के लिए उस ब्रिटिश अभियान दल ने एक विशेष प्रकार की तोप का उपयोग किया था। इस तरह, यह अभियान पिछले सभी अभियानों की तुलना में बेहतर साजो-सामान से लैस था।

10 मार्च, 1953 को अभियान दल ने काठमांडू से अपनी विजय-यात्रा शुरू की थी। अगले 15 दिनों में 170 मील (273.5 कि.मी.) की चढ़ाई के बाद 400 से अधिक लोगों का यह विशाल दल 25 मार्च को नाम्चे बजार (सोलुखुंबु जिला, सगरमाथा अंचल, उत्तर-पूर्वी नेपाल) पहुँचा था, जहाँ पर उस अभियान का मुख्यालय स्थापित किया गया था। यह खुंबू हिमनद क्षेत्र के भीतर 11,286 फीट (3,440 मीटर) की ऊँचाई पर स्थित है। शेरपा समुदाय की अधिकांश आबादी यहीं पर बसी हुई है। नाम्चे बजार से 20 मील (32 कि.मी.) आगे 17,598 फीट (5,364 मीटर) की ऊँचाई पर आधार शिविर (बेस कैम्प) स्थापित किया गया था, जहाँ अभियान दल 12 अप्रैल को पहुँचा था।

उसके ऊपर की चढ़ाई बहुत मुश्किल थी, जिसके लिए उस अभियान दल के सदस्यों ने जबरदस्त सामूहिक कार्य का प्रदर्शन किया था। अभियान दल को दो या तीन पर्वतारोहियों के दल में विभाजित किया गया था। पहला दल उपकरणों के साथ धीरे-धीरे पाँव रखने की जगह बनाते हुए अगले शिविर की स्थापना करता था, जिसके पीछे दूसरा समूह पहुँचता था और आगे की ओर बढ़ता था। इसी तरह, एडमंड हिलेरी व दो अन्य पर्वतारोही जॉर्ज बैंड न जॉर्ज लोव ने धीरे-धीरे चढ़ना शुरू किया था। उन लोगों ने 15 अप्रैल को 19,400 फीट की ऊँचाई पर शिविर-2 और फिर 22 अप्रैल को 20,200 फीट की ऊँचाई पर बर्फ के झरने के ऊपर शिविर-3 की स्थापना की थी। फिर, जॉन हंट, चार्ल्स इवांस व टॉम बौर्दिल्लों के दल ने आगे बढ़ना शुरू किया था और 1 मई को शिविर-4 की स्थापना की थी। उन्होंने 2 मई को ल्होत्से के पश्चिमी पार्श्व-भाग, जिसे 'ल्होत्से का चेहरा' कहा जाता है, की टोह ली थी और फिर 22,000 फीट की ऊँचाई पर शिविर-5 की स्थापना की थी। फिर चार्ल्स इवांस व टॉम बौर्दिल्लों ने माइकल वार्ड व चार्ल्स वाइली की मदद से 4 मई को 24,000 फीट की ऊँचाई पर स्थित 'ल्होत्से-चेहरा' के तल

पर शिविर-6 को स्थापित किया था। इसके ऊपर 2000 फीट चढ़ने में 14 दिन लग गए थे। विल्फ्रिड नॉएस व जॉर्ज लोव ने 17 मई को 26,000 फीट की ऊँचाई पर शिविर-7 स्थापित किया था। फिर, चार दिनों की कोशिश के बाद 21 मई को विल्फ्रिड नॉएस व शेरपा अन्नुल्लू शिविर-7 के पास 25,938 फीट (7906 मीटर) की ऊँचाई पर 'साउथ कोल' (दक्षिणी दर्रा) पर पहुँचने में सफल हो गया था।

अब जॉन हंट ने अंतिम चढ़ाई की तैयारियाँ शुरू की थीं। उसने सबसे पहले चार्ल्स इवांस व टॉम बौर्दिल्लों को आगे भेजने का फैसला किया था। वे दोनों बंद परिपथ (क्लोज सर्किट) ऑक्सीजन सिलिंडर व विशेष प्रकार के वस्त्रों से लैस थे। उन्होंने 26 मई को ऊपर की चढ़ाई शुरू की थी। वे 28,700 फीट (8,750 मीटर) ऊँचाई पर स्थित दक्षिणी शिखर (साउथ समिट) पर पहुँचने में तो सफल हो गए थे, लेकिन वे ऑक्सीजन खत्म हो जाने व बुरी तरह थक जाने व समय की कमी के कारण और ऊपर चढ़ने की हिम्मत नहीं जुटा सके थे और उन्हें वापस मुड़ जाना पड़ा था। फिर 27 मई को एडमंड हिलेरी व तेनजिंग नॉरगे की जोड़ी ने 'साउथ कोल' (दक्षिणी दर्रा) मार्ग से अंतिम चढ़ाई शुरू की थी। याद रहे कि तेनजिंग नॉरगे ने पिछले वर्ष इसी रास्ते से रेमंड लैंबर्ट के साथ 28,200 फीट (8,600 मीटर) की ऊँचाई पर पहुँचने का कीर्तिमान बनाया हुआ था। संभवतः यही कारण था कि दो दिनों की जद्दोजहद के बाद 29 मई को 11.30 बजे हिलेरी-तेनजिंग की जोड़ी एवरेस्ट पर कदम रख पाने में सफल हो गई थी।

लेकिन, तेनजिंग नॉरगे ने इस महान् सफलता का श्रेय पहली कोशिश करनेवाली चार्ल्स इवांस व टॉम बौर्दिल्लों की जोड़ी सहित समूचे अभियान दल की सामूहिक कोशिश को दिया था। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा था, “वे (चार्ल्स इवांस व टॉम बौर्दिल्लों) थके व बीमार लग रहे थे, वे इस बात से भी बहुत अधिक निराश थे कि वे स्वयं शिखर पर नहीं पहुँच सके थे, लेकिन उन्होंने सलाह देने और हमारी मदद के लिए अपनी तरफ से वह सबकुछ किया, जो वे कर सकते थे और मैंने सोचा, सचमुच, पर्वत इसी तरह व्यवहार करता है; पर्वत इसी प्रकार व्यक्ति को महान् बनाता है; क्योंकि अगर दूसरों ने साथ नहीं दिया होता, तो हिलेरी और मैं वहाँ नहीं होते! क्या होता अगर वे पर्वतारोही वहाँ नहीं होते, जिन्होंने रास्ता बनाया; और वे शेरपा, जिन्होंने सामान ऊपर पहुँचाया? यह सब उन्हीं लोगों के काम का और त्याग का नतीजा था कि अब हमें शिखर पर पहुँचने का अवसर मिलने जा रहा था।”

क्या सामूहिक कार्य की महान् सफलता का इससे भी उत्कृष्ट उदाहरण मिल सकता है?

□

अध्याय-4

सपनों का कार्य-समूह

“व्यापार के लिए मेरा नमूना ‘द बीटल्स’ है। वे चार लोग थे, एक-दूसरे की नकारात्मक प्रवृत्तियों को नियंत्रण में रखते थे। उन्होंने एक-दूसरे को संतुलित रखा और हिस्सों के जोड़ से ‘कुल’ अधिक था। मैं व्यापार को इसी तरह देखता हूँ। व्यापार में कभी भी बड़े-बड़े काम एक व्यक्ति द्वारा नहीं किए जाते हैं, वे लोगों के कार्य-समूह द्वारा किए जाते हैं।”

— स्टीव जॉब्स

अंग्रेजी रॉक बैंड ‘द बीटल्स’ को विश्व इतिहास का सबसे लोकप्रिय बैंड होने का गौरव प्राप्त है। चार मित्र कलाकारों जॉन लेनन, पॉल मेकार्टनी, जॉर्ज हैरिसन व रिंगो स्टार ने 1960 में लिवरपूल (उत्तर-पश्चिमी इंग्लैंड) में इसे शुरू किया। हालाँकि वह 1970 में ही भंग हो गया था, लेकिन तब तक वह रॉक युग का सबसे महत्वपूर्ण और सबसे प्रभावशाली प्रदर्शन बन चुका था। 1999 में ‘टाइम’ पत्रिका ने इन चारों कलाकारों को सामूहिक रूप से 20वीं सदी के 100 सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों की सूची में शामिल किया था। जॉन लेनन ने बयान दिया था कि ‘बीटल्स यीशु की तुलना में अधिक लोकप्रिय है’ और दिसंबर 1980 में सनकी यीशु भक्त की गोलियों का शिकार बन गया था। फिर, नवंबर 2001 में जॉर्ज हैरिसन फेफड़े के कैंसर का शिकार बना था। वैसे तो अलग होने के बाद भी वे सफल पेशेवर जीवन का आनंद लेते रहे थे और पॉल मेकार्टनी व रिंगो स्टार अभी भी संगीत क्षेत्र में बने हुए हैं, लेकिन उनकी कमाई का मुख्य स्रोत 10 वर्षों का ‘सामूहिक कार्य’ ही बना रहा था। 2012 तक ‘द बीटल्स’ के 1 अरब से ज्यादा रिकॉर्ड बिक चुके थे और अभी भी उन कालजयी संगीत-रचनाओं की माँग बनी हुई है।

अपने उपरोक्त उद्धरण में स्टीव जॉब्स ने कहा है कि चूँकि ‘द बीटल्स’ के चार लोगों ने एक-दूसरों की कमियों को नियंत्रित-संतुलित रखा था, इसीलिए उनकी अलग-अलग प्रतिभाओं के जोड़ से जो ‘कुल’ निकला था, यानी जो सामूहिक-रचनाएँ पैदा हुई थीं, वे ‘अधिक’ थीं। इसके साथ ही, स्टीव जॉब्स ने व्यापार का अपना नजरिया भी साफ किया है कि व्यापार में कभी भी बड़े-बड़े काम एक व्यक्ति द्वारा नहीं, बल्कि लोगों के कार्य-समूह द्वारा किए जाते हैं, लेकिन इन कथनों से यह साफ नहीं होता कि ‘द बीटल्स’ के ‘सामूहिक कार्य सिद्धांत’ क्या थे, जिन्हें स्टीव जॉब्स ने अपना व्यापारिक नमूना बनाया था और ऐप्पल को दुनिया की सबसे नवाचारी सूचना प्रौद्योगिकी कंपनी के रूप में विकसित व प्रतिष्ठित करने में सफल रहा था? इन्हीं अद्भुत सिद्धांतों में वह रहस्य छुपा हुआ है, जिससे स्टीव जॉब्स ने अपने सपनों को साकार करनेवाला कार्य-समूह बनाया था, जो एक के बाद एक, अनेक क्रांतिकारी प्रौद्योगिकी उत्पादों की रचनाएँ करता रहा था। यदि वे सामूहिक कार्य सिद्धांत स्टीव जॉब्स के लिए फलदायी थे, तो हमारे लिए भी उतने ही महत्वपूर्ण साबित होंगे। तो आइए हम भी ‘द बीटल्स’ से सीखते हैं अपने सपनों का कार्य-समूह बनाने के गुर!

‘द बीटल्स’ के ‘सामूहिक कार्य सिद्धांत’

यदि हम प्रबंधन कार्य-समूहों के लिए ‘द बीटल्स’ की प्रासंगिकता को समझना चाहते हैं, तो हमें 9 फरवरी,

1964 से शुरू होना पड़ेगा। उस रात 'द बीटल्स' ने टेलीविजन कार्यक्रम 'द एड सुलिवन शो' के प्रदर्शन के साथ अमेरिका में अपनी शुरुआत की थी। यह अमेरिकी टेलीविजन प्रसारण का ऐतिहासिक कार्यक्रम साबित हुआ था, जिसे अनुमानित 7.30 करोड़ दर्शकों ने देखा था। इस कार्यक्रम को अमेरिकी पॉप संस्कृति के इतिहास में मील का पत्थर और अमेरिकी संगीत उद्योग में ब्रिटिश-आक्रमण की शुरुआत माना जाता है। उस कार्यक्रम के श्वेत-श्याम चलचित्र (ब्लैक एंड व्हाइट फिल्म) को अभी भी पॉप-संस्कृति की शास्त्रीय रचना के रूप देखा जाता है। उस रात जब चार युवा संगीतकार—जॉन लेनन, पॉल मैककार्टनी, जॉर्ज हैरिसन व रिंगो स्टार शोरगुल करते किशोरों व युवाओं से खचाखच भरी नाट्यशाला में उपस्थित हुए थे तो बिल्कुल सुकून व आत्मविश्वास से 'ऑल माय लविंग' (मेरे सभी प्यारे) गाना शुरू किया था।

रिंगों के ड्रम-उपकरणों को मंच से ऊपर उठाकर रखा गया था, जो उस जमाने की असामान्य मंच व्यवस्था थी। ऐसा इसलिए किया गया था कि रिंगो स्टार अन्य तीन साथियों के बराबर दर्शकों का ध्यान आकर्षित कर सकें। इससे साबित होता था कि यह चार बराबर कलाकारों का समूह था, न कि तेज-तर्रार प्रमुख गायक के पीछे खड़ी संगीत-कलाकारों की मंडली। वे सभी मुसकरा रहे थे और वे एक साथ अपनी जिंदगियों के मजे लूट रहे थे। यहाँ पर स्टीव जॉब्स का कथन सही साबित हो रहा था कि उनकी सामूहिक उपलब्धि उनकी व्यक्तिगत उपलब्धियों के जोड़ से बहुत अधिक थी। मंच पर तो वे चार व्यक्ति-विशेष नजर आ रहे थे, लेकिन ज्यों ही उनका प्रदर्शन शुरू हुआ था, वे चार जिस्म—एक जान से हो गए थे। फिर जो जादुई प्रदर्शन संभव हुआ था, वह सिर्फ उनके संगीत के कारण ही नहीं था।

यह सब कैसे संभव हुआ था? वे एक साथ मिलकर गीतों की रचना कैसे करते थे? वे अपनी जन्मजात रचनात्मकताओं को बढ़ाने के लिए कौन सी तकनीक इस्तेमाल करते थे? वे हमेशा एक साथ ही रहते थे तो उनके बीच स्वाभाविक रूप से तनाव की स्थितियाँ भी आती होंगी! लेकिन वे उन तनावपूर्ण क्षणों को कैसे शांत कर पाते थे? साफ है कि 'द बीटल्स' ने अपने जादुई प्रदर्शन को सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रकार के सामूहिक कार्य सिद्धांतों को विकसित किया था। यदि आपको उच्च प्रदर्शन करनेवाले पेशेवरों का कार्य-समूह बनाना है या फिर आप अपने संगठन में सामूहिक कार्य-भावना, रचनात्मकता व ग्राहकों से जुड़ने की क्षमता में सुधार करना चाहते हैं तो पहले 'द बीटल्स' के इन सामूहिक कार्य-सिद्धांतों को गहराई से समझना पड़ेगा और फिर उन्हें कृत-संकल्प होकर लागू भी करना होगा।

सप्ताह के आठ दिन

'द बीटल्स' ने अपने पेशेवर संगीत जीवन की शुरुआत 'प्लीज प्लीज मी' संगीत-संग्रह (म्यूजिक एल्बम) के साथ की थी। रोचक तथ्य यह है कि उन्होंने ईएमआई स्टूडियो (अब, ऐबी रोड स्टूडियो, 3 ऐबी रोड, सेंट जॉन्स वुड, वेस्टमिंस्टर, लंदन) में इस संग्रह के सभी 10 गीतों का एक ही दिन (11 फरवरी, 1963) में लगातार 13 घंटों में सजीव अभिलेखन (लाइव रिकॉर्डिंग) करवाया था। 22 मार्च, 1963 को, पार्लोफोन रिकॉर्ड्स ने इस संगीत संग्रह को एलपी (लांग प्लेइंग) रिकॉर्ड प्रारूप में इंग्लैंड के बाजारों में जारी किया था। धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता हुआ मई 1963 में 'प्लीज प्लीज मी' यूके एल्बम चार्ट्स में शीर्ष पर पहुँच गया था। लगातार 30 सप्ताहों तक शीर्ष पर बने रहने के बाद जब यह नीचे उतरा था, तो इसकी जगह 'द बीटल्स' के ही दूसरे संगीत संग्रह 'विश द बीटल्स' ने ली थी। ब्रिटिश श्रोताओं पर 'द बीटल्स' के संगीत का जादू जो एक बार चढ़ा तो उतरने का नाम ही नहीं ले रहा था।

'द बीटल्स' के उन 10 गानों में ऐसा क्या जादू था कि वे रातोंरात सनसनी बन गए थे? जादू यही था कि श्रोताओं

को वे गाने बहुत ही सहज लगे थे; मानो उन गीतों को गाने में कलाकारों की कोई मेहनत ही नहीं हुई थी! तो क्या यह जादू रातोंरात नहीं पैदा हो गया था? श्रोताओं को वे गाने उतने सहज क्यों लग रहे थे? जवाब यह है कि इस सहजता के पीछे 'द बीटल्स' के हजारों घंटों के सामूहिक प्रदर्शन थे, जो वे लोग लिवरपूल व हैबर्ग के क्लबों में करते आ रहे थे। जी हाँ, एक-दूसरे के चेहरों को देखते हुए हजारों घंटों के सामूहिक प्रदर्शनों के दौरान उन सभी चार कलाकारों के निजी व्यक्तित्व एकजुट होकर एकमात्र 'सामूहिक-व्यक्तित्व' में बदल गए थे। यही कारण था कि प्रतिस्पर्धी अंग्रेजी रॉक बैंड 'रोलिंग स्टोन्स' के मुख्य गायक माइकल फिलिप 'मिक' जैगर ने ईर्ष्यावश उनकी तुलना यूनानी परीकथाओं के चार सिरोंवाले नरभक्षी साँप 'हीड्रा' से कर दी थी।

जी हाँ, आज की आभासी कार्य-संस्कृति (वर्चुअल वर्क-कल्चर) में हम कार्यस्थलों में सामूहिक कार्य-भावना के विकास के लिए आमने-सामने (फेस-टू-फेस) होने की पारंपरिक महत्ता को लगभग भूल ही चुके हैं। अब हमारे पास अपने मातहत काम करनेवाले कार्य-समूहों के सदस्यों से मिलने-जुलने का समय ही नहीं होता। क्या यही कारण नहीं है कि आजकल अधिकांश कार्यस्थलों में सामूहिक कार्य-भावना (टीम वर्क स्पिरिट) का बिल्कुल अभाव-सा नजर आता है? यही कारण है कि कर्मचारीगण 'मनुष्य' की तरह नहीं, बल्कि 'यंत्र' की तरह शुष्क व्यवहार करने लगे हैं और उनके बीच पारस्परिक विश्वास (म्यूच्युअल ट्रस्ट) खत्म-सा हो गया है। ऐसे में यदि कार्य-समूह अपेक्षित प्रदर्शन नहीं कर पाता है तो यह किसका दोष है? साफ है कि सारा दोष कार्य-समूहों के नेतृत्वकर्ताओं का ही है। भले ही यह आभासी कार्य-संस्कृति उच्च प्रौद्योगिकी परियोजनाओं से सफल होती दिखाई पड़ रही हो, लेकिन यह अन्य सभी क्षेत्रों, विशेष रूप से सेवा-क्षेत्रों में, बुरी तरह असफल साबित हो रही है। इस मामले में सबसे बड़ी चुनौती बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ झेल रही हैं, जो ग्राहकों से सीधे संपर्क की बात तो बहुत दूर, अपने कर्मचारियों के बीच भी आपसी विश्वास कायम करने में बुरी तरह असफल साबित हो रही हैं।

तो 'द बीटल्स' का पहला सामूहिक कार्य सिद्धांत यही था कि सच्चे अर्थों में सामूहिक कार्य-भावना नजदीकी व साझा अनुभवों से ही विकसित हो सकती है। तो अब 'द बीटल्स' के 'सप्ताह में आठ दिन' का मतलब यही है कि कार्य-समूह को सीधे कार्यक्षेत्र में एक साथ उतारने से बहुत पहले उन्हें एक-दूसरे को जानने-समझने, आपसी विश्वास हासिल करने व सामूहिक कार्य-अभ्यास के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए।

लगातार बेहतर होते जाना

'द बीटल्स' की आश्चर्यजनक सफलता का दूसरा सबसे बड़ा कारण यह था कि उनकी संगीत-रचनाएँ लगातार बेहतर होती चली गई थीं। जैसा कि देखने में आता है कि अधिकांश रॉक बैंड बार-बार एक ही तरह की गीत रचनाएँ करते जाते हैं और उनके श्रोताओं व दर्शकों का दायरा बढ़ने की बजाय सिकुड़ता ही चला जाता है, लेकिन 'द बीटल्स' ने अपनी रचनाओं की ताजगी को बनाए रखने और उनमें नए-नए आयामों को जोड़ने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी थी। उनका हर गाना, हर संगीत संग्रह न केवल पहले से बेहतर होता चला गया था, बल्कि वे अन्य संगीत विधाओं को भी उनमें जोड़ते चले गए थे। असल में वे संगीत खोजी थे और हमेशा ऐसी चीजें ढूँढ़ने की कोशिशों में जुटे रहते थे, जो बिल्कुल अनसुनी हों।

वैसे तो 'द बीटल्स' ने 'रॉक ऐंड रोल' (1940 के दशक के अंत व 1950 के दशक के शुरू में अमेरिका में विकसित लोकप्रिय संगीत विधा) के आधार पर अपनी संगीत रचना शुरू की थी, लेकिन जल्द ही उसमें भारतीय शास्त्रीय संगीत, कंट्री (दक्षिण अमेरिका मूल का संगीत), वेस्टर्न (पश्चिमी अमेरिका व पश्चिमी कनाडा में बसे ब्रिटिश मूल के लोगों द्वारा गया जानेवाला संगीत), रिदम ऐंड ब्लूज (अफ्रीकी अमेरिकी संगीत), म्यूजिक हॉल

(ब्रिटिश नाट्य मनोरंजन संगीत), एकाॅस्टिक फोक (ध्वनिक लोकगीत) व जाज (न्यू ऑरलियंस के अफ्रीकी-अमेरिकी समुदाय द्वारा विकसित संगीत विधा) की विशेषताओं को जोड़ना शुरू कर दिया था। उन्होंने रिकॉर्ड के आवरण-चित्रों को कलाकृतियों में बदल दिया था और वास्तव में 'रॉक वीडियो' की रचना की थी। दिलचस्प तथ्य यह है कि 'द बीटल्स' ने वास्तव में इनमें से अधिकांश संगीत विचारों का आविष्कार नहीं किया था, लेकिन वे अपनी सीमाओं से बाहर निकले थे और उन क्रांतिकारी विचारों को नए तरीकों से जोड़ने की हिम्मत दिखाई थी, जिससे 'रॉक ऐंड रोल' की शब्दावली में भारी विस्तार हुआ था।

'द बीटल्स' के लिए कोई भी विषय अच्छा नहीं था। जॉन लेनन को 'द बीटल्स' के सबसे प्रभावशाली गीतों में से एक 'ए डे इन लाइफ' (जीवन में एक दिन) की रचना की प्रेरणा 'डेली मेल' में प्रकाशित उस दुखांत आलेख से मिली थी, जिसमें कार दुर्घटना में मारे गिनीज (विश्वप्रसिद्ध बीयर ब्रांड) परिवार के 21 वर्षीय वारिस तारा ब्राउन के दो छोटे बच्चों के संरक्षण संबंधी कानूनी फैसले की सूचना दी गई थी। जब ऐबी रोड स्टूडियो के बाहर मेटा डेविस नाम की महिला यातायात अधिकारी ने पॉल मेकार्टनी को यातायात-उल्लंघन के आरोप में कानूनी सूचना-पत्र जारी किया था, तब उसके दिमाग में 'लवली रीटा' गीत की रचना का विचार कौंधा था। जब पॉल मेकार्टनी ने जेन आशेर (अंग्रेजी अभिनेत्री व लेखिका) से अपनी लंबी प्रेम कहानी को आधार बनाकर 'मार्था माय डियर' गीत की रचना की थी तो उसे शीर्षक की प्रेरणा अपनी प्यारी कुतिया 'मार्था' से मिली थी। इसी तरह एक बहुत अधिक मेहनत करनेवाले वाहन चालक की बगैर सोची-समझी टिप्पणी को मेकार्टनी ने अपने गीत 'ऐट डेज इन वीक' का शीर्षक बना लिया था। जी हाँ, 'द बीटल्स' में अवलोकन करने की अत्यंत गंभीर क्षमताएँ थीं। वे अपने आसपास की दुनिया को बहुत ही बारीकी से परखते थे, उनसे प्रेरणा ग्रहण कर गीतों की रचना करते थे; उन्हें संगीत के चौखटे में उतारते थे और खड़े करते थे और फिर हमारे सामने प्रस्तुत कर देते थे।

'द बीटल्स' के सदस्यों को अच्छी तरह से पता था कि आत्मसंतुष्टि स्थायी सफलता की दुश्मन है। यही कारण था कि वे शुरुआती सफलताओं से आत्मसंतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने अपनी हर सफलता को खुद ही चुनौती देकर रचनात्मकता के अगले स्तर पर पहुँचाने की कोशिश की थी; और एक के बाद एक अद्भुत संगीत रचनाओं का क्रम बनाए रखा था। 'द बीटल्स' के जो गीत अमेरिका व इंग्लैंड दोनों बाजारों की संगीत-सारणियों में शीर्ष पर थे, वे ये हैं—1963 में 'शी लव्स यू' (वह तुम्हें प्यार करती है) व 'आई वांट टू होल्ड योर हैंड्स' (मैं तुम्हारा हाथ पकड़ना चाहता हूँ); 1964 में 'कैननॉट बाय मी लव' (मुझे प्यार नहीं खरीद सकते), 'ए हार्ड डे 'ज नाइट' (एक मुश्किल दिन की रात) व 'आई फील फाइन' (मुझे ठीक लग रहा है); 1965 में 'हेल्प!' (मदद!), 'टिकेट टू राइड' (सवारी के लिए टिकट) व 'कैन वर्क इट आउट' (हम इसका हल निकाल सकते हैं); 1966 में 'पेपरबैक राइटर' (पुस्तिका लेखक); 1967 में 'ऑल यू नीड इज लव' (आपको बस प्यार की जरूरत है) व 'हैलो, गुडबाय' (नमस्ते, अलविदा); और 1968 में 'हाय जूड' (नमस्कार जूड) व 'गेट बैक' (पीछे हटो)। जी हाँ, 'द बीटल्स' का काम भी कुछ इसी तरह से था, जैसे कि अमेजन.कॉम ने पुस्तकों के मूल कारोबार में अन्य वर्ग की वस्तुओं; पॉर्श ने अपने सफल बॉक्सटर (स्पोर्ट्स कार) व कायेन एसयूवी की नई श्रृंखलाओं और ऐप्पल ने कंप्यूटर के मूल कारोबार में लोकप्रिय आइपॉड म्यूजिक प्लेयर व अन्य संबंधित सॉफ्टवेयर को जोड़कर अपने-अपने कारोबार का बड़ा बनाया था।

तो 'द बीटल्स' का दूसरा सामूहिक कार्य-सिद्धांत यही था कि हम अपने उत्पादों (गीतों) को लगातार विकसित करते रहें और अपने ग्राहकों से सौर्वी मुलाकात के दौरान भी अपने विचारों, नए दृष्टिकोणों व उत्साह का वही स्तर बनाए रखें, जो कि पहली मुलाकात के दौरान रहा था।

मित्रों की मदद से स्वयं को सुधारें

‘द बीटल्स’ की शुरुआती सफलता मुख्य रूप से लेनन व मेकार्टनी के गीत-लेखन कौशल पर निर्भर थी, लेकिन जल्द ही बाकी दोनों सदस्यों ने भी वह कला विकसित कर ली थी। इतना ही नहीं, उन सभी ने अपनी विशेषज्ञताओं को भी बढ़ाया था और अपने साथियों की विशेषज्ञताओं को भी अपने कलाकार व्यक्तित्व में शामिल किया था। इस तरह, हर सदस्य ने खुद को चार-सितारा कलाकार में बदल लिया था, जो गीत भी लिख सकता था, संगीत रचनाएँ भी कर सकता था, गा सकता था और सारे वाद्यों को भी बजा सकता था।

लेकिन यह सब बस यूँ ही नहीं हो गया था। इसके लिए ‘द बीटल्स’ को व्यापक रणनीतियाँ बनानी पड़ी थीं और उन्हें अपने कार्य-व्यवहार में उतारना पड़ा था। उदाहरण के लिए, रॉक समूहों में ड्रमर हमेशा यही महसूस करते थे कि उसे अपने अन्य साथियों के मुकाबले कम महत्त्व मिलता है। रिंगो स्टार कोई अपवाद नहीं था, उसे भी ऐसा ही महसूस होता था। तो ‘द बीटल्स’ ने इसके लिए क्या समाधान निकाला था? पहला, यह कि मंच पर ड्रम उपकरणों के स्थान को ऊँचा बना दिया था, ताकि बाकी तीन खड़े कलाकारों के साथ-साथ वह भी दर्शकों को नजर आ सके, लेकिन वे लोग अपने सभी साथियों को हर लिहाज से बराबर दिखाना चाहते थे। इसीलिए लेनन व मेकार्टनी ने लगभग हर संगीत-संग्रह में रिंगो स्टार से गवाने के लिए कम-से-कम एक गीत की रचना की थी।

वे यहीं नहीं रुके, उनको लगता था कि सारी दुनिया उनकी सामूहिक-भावना को समझे व सीखे, इसीलिए उन्होंने इस विषय पर एक गीत की ही रचना कर दी थी, जिसका शीर्षक था—‘विद द लिटिल हेल्प फ्रॉम माय फ्रेंड्स’ (अपने दोस्तों की थोड़ी सी मदद से)। जी हाँ, यह गीत भी लेनन व मेकार्टनी ने रिंगो स्टार के ही गाने के लिए लिखा था और उसे भी जनता से सीधे जुड़ने के लिए विशेष मंच प्रदान किया था। इसी तरह, जब जॉर्ज हैरिसन की संगीत-रचना प्रतिभा विकसित हुई थी तो अन्य सदस्यों ने उससे गीत भी गवाने शुरू कर दिए थे, जैसे कि ‘हियर कम्स द सन’ (यहाँ सूर्य की रोशनी आती है), ‘समथिंग’ (कुछ-कुछ) आदि।

इस तरह, जब ‘द बीटल्स’ ज्यों-ज्यों ‘संगीत समूह’ के रूप में परिपक्व होते गए थे, तो उन्होंने अपने हरेक सदस्य को पहचान दिलाने व गले लगाए रखने के लिए ज्यादा परिश्रम भी किया था। मेहनत व कोशिश का फल मीठा ही निकलना था। जब ‘द बीटल्स’ विशाल सामूहिक ब्रांड के रूप में उभरा था, तो उसके भीतर चार व्यक्तिगत ब्रांड भी बराबर रूप से चमक रहे थे। इस तरह, ‘द बीटल्स’ ‘एक ब्रांड के भीतर कई ब्रांड’ (ब्रांड्स विद्‌िन द ब्रांड) का जीवंत उदाहरण साबित हो सका था।

जी हाँ, सितारों को एक-साथ रखना कोई आसान काम नहीं है। हम देखते हैं कि कार्य-समूहों में, विशेष रूप से युवा पेशेवर, अकसर यही महसूस करते हैं कि उन्हें कम महत्त्व मिलता है। याद रहे कि संपूर्ण का हिस्सा महसूस करना बहुत अच्छी बात है, लेकिन अंत में सभी को व्यक्तिगत महत्त्व की भावना की जरूरत होती है। तो हम अपने कार्य-समूहों के प्रत्येक सदस्य को ऐसी परियोजना क्यों नहीं सौंपते, जो उन्हें अपने आप में अच्छे बनाकर उभारे?

तो ‘द बीटल्स’ का तीसरा सामूहिक कार्य सिद्धांत यही था कि कार्य-समूह के सदस्यों को ‘एक ब्रांड के भीतर कई ब्रांड’ बनने के लिए मदद की जाए और हरेक को ऐसा विचार या परियोजना-प्रस्ताव दिया जाए, जो उसे खुद की चमक को बढ़ाने में मदद कर सके।

मुझे तुम्हारी जरूरत है

अनुसंधान से पता चलता है कि ज्यादातर प्रबंधक उन व्यक्तियों को नियुक्त करते हैं, जो उनकी तरह के होते हैं; और इस तरह वे उनकी छवि में भी सजातीय कार्य-समूहों का ही संयोजन कर लेते हैं। इसके विपरीत, विश्व

इतिहास की सबसे सफल गीत-लेखन जोड़ी, जो जॉन लेनन व पॉल मेकार्टनी नामक दो व्यक्तियों से बनी थी, लगभग हर मामले में एक-दूसरे से भिन्न थी। वे लोग पहली बार जुलाई 1957 में मिले थे। तब लेनन 16 वर्ष का सनकी, गुस्सैल व हमेशा दूसरों पर व्यंग्य कसनेवाला युवा था, जो हमेशा मुसीबत ही मोल लेता रहता था। अंत में, वह 'बीटल्स' की प्रसिद्धि से भी घृणा करने लगा था, लेकिन दूसरी तरफ, मेकार्टनी आशावादी व मेहनती युवा था। वह दूसरों को खुश करना पसंद करता था और बाद में प्रसिद्धि को गहराई से प्यार करने लगा था। इतने विपरीत स्वभाव के होने के बावजूद वे एक-दूसरे की ओर खींचे चले आए थे। क्योंकि, वे अमेरिकी 'रॉक एंड रोल' संगीत से बेहद प्यार करते थे और उन दोनों में संगीत की महत्वाकांक्षा बहुत ही प्रबल थी।

जब बाद में, मेकार्टनी यह गानेवाला था कि 'आई हैव गॉट तो एडमिट इट इज गेटिंग बेटर' (मैं मानता हूँ कि यह बेहतर हो रही है) तो लेनन विपरीत तीखे सुरों में यह बोलनेवाला था कि कैन नॉट गेट मच वर्स (ज्यादा बुरा नहीं मिल सकता)। इन्हीं विपरीत कथनों से तो दोनों गानों में जादुई प्रभाव लानेवाले थे। सचमुच, अपने विपरीत स्वभावों के चलते ही वे हमेशा एक-दूसरे के संगीत-विचारों के पूरक बन जाते थे और बेहतर गीत-रचना के लिए एक-दूसरे को उकसाते भी रहते थे। इस तरह, उन दोनों ने एक-दूसरे के स्वभाव को संतुलित किया था और एक-दूसरे की ज्यादातियों की कटौती भी की थी। तभी तो, यदि लेनन के बोल आपको सोचने पर मजबूर कर पाते थे, तो मेकार्टनी की मार्मिक व डरावनी धुनें आपकी रीढ़ में झुनझुनी पैदा कर पाने में सक्षम थीं।

जी हाँ, 'द बीटल्स' ने अपनी अद्भुत सामूहिक कार्यक्षमता के प्रदर्शन से साबित कर दिखाया था कि स्वस्थ मतभेद व मित्रतापूर्ण प्रतिस्पर्धा सामूहिक रचनात्मकता में ईंधन का काम करती हैं। साफ है कि अपनी जैसी ही प्रतिभाओं को इकट्ठा कर लेने से वह कार्य-समूह नहीं गढ़ा जा सकता है, जो आपके बड़े-बड़े सपने पूरे कर सके। इसके लिए प्रभावी कार्य-समूह में विशेषज्ञों (स्पेशलिस्ट) व सामान्यज्ञों (जनरलिस्ट) का सम्मिश्रण बहुत जरूरी होता है। मेकार्टनी व लेनन बैंड के सामान्यज्ञ थे और हरेक में संगीत व कला की व्यापक प्रतिभाएँ थीं। वे दोनों संगीत-उपकरणों की पूरी शृंखला को बजा सकते थे; संगीत रचना कर सकते थे और विविध प्रकार के गीत भी लिख सकते थे। उन दोनों की प्रतिभाओं की व्यापकता ने ही 'द बीटल्स' के अनेक नवाचारों को ईंधन देने का काम किया था। इनके विपरीत, 'द बीटल्स' के बाकी दोनों सदस्य—जॉर्ज हैरिसन व रिंगो स्टार प्रमाणित विशेषज्ञ थे। हैरिसन नेतृत्वकारी गिटारवादक थे, तो रिंगो स्टार की महारत ड्रम वादन में थी। हालाँकि वे भी थोड़ा-बहुत सबकुछ करते थे, लेकिन उन्होंने कभी भी खुद को अपनी विशेषज्ञताओं से दूर नहीं होने दिया था, बल्कि उन विशेषज्ञताओं की चमक को लगातार बढ़ाया ही था। यही कारण था कि हैरिसन गिटार वादन हमेशा और अधिक मौलिक, मधुर व प्रभावी होता चला गया था। इसी तरह, रिंगो स्टार ने ऐसी ड्रम (ढोल) वादन शैली विकसित की थी, जो मूल प्रकृति में दूसरों से बिल्कुल अलग थी और श्रोता देखे बिना भी उसे पहचान सकते थे।

साफ है कि प्रभावी कार्य-समूहों की रचना की कला इस तथ्य में निहित है कि आप प्रमाणित विशेषज्ञों व व्यापक प्रतिभाओं से संपन्न सामान्यज्ञों का सम्मिश्रण कैसे कर पाते हैं? विडंबना यह है कि अधिकतर बड़ी कंपनियों के कार्य-समूहों में विशेषज्ञों की भरमार है और वे अपने उत्पादों व सेवाओं को ग्राहकों की जरूरतों के व्यापक व्यापारिक संदर्भ में नहीं रख पाते। वे पाँव बचाने के चक्कर में रोगी को ही मार डालते हैं। ध्यान रहे कि विशेषज्ञों की तुलना में विभिन्न विषयों की गहरी समझ रखनेवाले सामान्यज्ञों का निर्माण ज्यादा कठिन है। ऐसे उम्मीदवारों के निर्माण के लिए सावधानीपूर्वक भरती, पेशेवर जीवन के रचनात्मक प्रबंधन और व्यापक कौशल विकास की जरूरत पड़ती है। अपने विशेषज्ञों के कार्य-समूहों में कुछ सामान्यज्ञों को भी डालकर देखिए, आपको बहुत ही शक्तिशाली परिणाम मिलेंगे।

तो 'द बीटल्स' का तीसरा सामूहिक कार्य-सिद्धांत यही था कि एक ही कार्य-समूह में बहुत ही विविध प्रकार के पेशेवरों को रखें, सामान्यज्ञों का विशेषज्ञों के साथ सम्मिश्रण करें और सबसे अच्छे विचारों के उत्पादन के लिए उनके बीच मित्रतापूर्ण प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दें।

और अंत में

सन् 1970 में 'द बीटल्स' का अलगाव एक बहुत बड़ा सवाल उठाता है—जब अत्यधिक प्रतिभाशालियों का कार्य-समूह अपनी पेशेवर उपलब्धियों के शीर्ष पर पहुँच जाए तो उसे एक साथ कैसे रखें? एक बार जब आपने सभी दुश्मनों को मार गिराया है तो फिर आप अपनी रचनात्मकता, उत्साह व प्रेरणा को कैसे जगाए रख पाते हैं? माइक्रोसॉफ्ट कॉर्पोरेशन के सह-संस्थापक बिल गेट्स के सामने भी यही सवाल आया था। इसमें कोई शक नहीं कि उसे भी इसके बारे में सोचते हुए अपनी कुछ रातों की नींद हराम करनी पड़ी थी।

'द बीटल्स' के गठन का मूल आधार उनका महान् संगीत था, लेकिन वे सभी अपने आपमें महान् संगीतकारों से भी बहुत कुछ ज्यादा ही थे। हम गीतकारों व संगीतकारों के रूप में 'द बीटल्स' की देसी प्रतिभाओं की नकल तो नहीं कर सकते, लेकिन हम उनकी सफलता के अन्य भागों से बहुत कुछ सीख सकते हैं और उनके कार्य-सिद्धांतों को अपने पेशेवर कार्य-व्यवहार में उपयोग कर सपने साकार करनेवाले कार्य-समूहों की रचना जरूर कर सकते हैं। 'द बीटल्स' हमें याद दिलाता है कि किसी भी सफल संगठन का सार व्यक्ति-विशेषों के छोटे दल होते हैं; वे लोग वही काम करते हैं, जिनसे वे प्यार करते हैं; वे एक साथ मिलकर काम कर मजा लूटते हैं; और वे अपनी व्यक्तिगत पहचान को बनाए रखते हुए भी खुद को संपूर्ण कार्य-समूह का अहम हिस्सा महसूस करते हैं।

आप 'द बीटल्स' के शुरुआती जीवंत प्रदर्शनों व प्रेस सम्मेलनों के चलचित्रों को देखें, फिर उनके अन्य संगीत-संग्रहों के गानों को ध्यानपूर्वक सुनें, मेरा दावा है कि आपको न केवल अपूर्व आनंद आएगा, बल्कि आपको ऊपर चर्चा किए गए सिद्धांतों का जीवंत अनुभव भी हासिल करने का मौका मिलेगा।

वैसे, इस दार्शनिक तथ्य को ध्यान में रखें, संपूर्णता ही मृत्यु है! आप जब तक अपने पेशेवर जीवन को लगातार सीखने का माध्यम बनाए रख पाते हैं, तभी तक उसकी रचनात्मकता को बनाए रख सकते हैं। यही कारण है कि अधिकांश बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने बेहद सफल कार्यकारियों के लिए ज्यादा चुनौतीपूर्ण परियोजनाओं की रचना करती रहती हैं और उन्हें स्वामियों का दर्जा भी देती हैं। चाहे आपका कार्य-समूह छोटा है या बड़ा, यदि आप एक समूह के रूप में सफल होते हैं, तो उसके सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से सफल साबित करना होगा। यदि संगठन को लगातार बढ़ा होना है, तो उसे अपने पेशेवरों की व्यक्तिगत उपलब्धियों को लगातार बढ़ा बनाए रखना पड़ेगा। अन्यथा प्रतिभाओं को एक साथ समेटे रखना असंभव ही है। यही कारण है कि दुनिया के सबसे सफल कार्य-समूह के अधिकांश सदस्य उससे बाहर हो जाते हैं और अपने अधूरे व्यक्तिगत सपनों को पूरा करने के लिए नए-नए उद्यमों को जन्म देते हैं।

क्यों टूटा अमेरिकी बास्केटबॉल सपना?

जैसा कि हम 'द बीटल्स' के उदाहरण से समझ सके हैं कि कोई भी कार्य-समूह तभी तक प्रभावी रह पाता है, जब तक उसके सदस्यों की 'व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा' उसकी 'सामूहिक महत्वाकांक्षा' का हिस्सा बनी रहती है। अब हम इस तथ्य का विश्लेषण करने जा रहे हैं कि जिस अमेरिकी बास्केटबॉल टीम को 'ड्रीम टीम' कहा गया था, वह 2004 ओलंपिक में क्यों बुरी तरह पराजित हुई थी? इस सवाल का जवाब हम 1920 के दशक के महान्

अमेरिकी बास्केटबॉल खिलाड़ी जॉर्ज हरमन 'बेब' रुथ जूनियर के इन शब्दों में ढूँढ़ सकते हैं, "पूरी की पूरी टीम के रूप में कोई टीम जिस तरह से खेलती है, वही उसकी सफलता को निर्धारित करता है। आपके पास दुनिया के व्यक्ति-विशेष सितारों का सबसे बड़ा झुंड हो सकता है, लेकिन अगर वे एक साथ नहीं खेलते हैं, तो क्लब एक पैसा भी लायक नहीं होगा।"

वर्ष 1992 की गरमियों में संयुक्त राज्य अमेरिका ने ओलंपिक के लिए बास्केटबॉल टीम का गठन किया था। यह पहला मौका था, जब अमेरिकी बास्केटबॉल ओलंपिक टीम में नेशनल बास्केटबॉल एसोसिएशन (एनबीए) के तत्कालीन खिलाड़ियों को लेने का फैसला किया गया था। उस टीम में लैरी बर्ड, मैजिक जॉनसन, माइकल जॉर्डन, स्कोटी पिप्पेन, कार्ल मेलोन, पैट्रिक इविंग, डेविड रॉबिंसन व चार्ल्स बर्कले जैसे नामचीन खिलाड़ियों को भी शामिल किया गया था। बास्केटबॉल के इतिहास में वह पहली ऐसी टीम थी, जिसे इतने दिग्गज खिलाड़ियों को शामिल कर तैयार किया गया था और उसे अंतरराष्ट्रीय खेल पत्रिका 'स्पोर्ट्स इलस्ट्रेटेड' ने 'ड्रीम टीम' (सपनों का खेल दल) नाम दिया था। इतना ही नहीं, उस 'ड्रीम टीम' को अचूक बनाने के लिए भी माइक करजीजेव्सकी जैसे दिग्गज प्रशिक्षक भरती किए गए थे।

खैर, 1992 की 'ड्रीम टीम' ने अपने प्रचार को सही साबित किया था। हरेक खेल में उसने 100 से अधिक अंक हासिल किए थे और औसत 43.8 अंकों से सभी में विजयी रही थी। उस टीम का इतना दबदबा था कि उसके 117 अंकों के मुकाबले सिर्फ क्रोशिया ही 85 अंकों तक पहुँच सकी थी। इस तरह, उस टीम ने स्वर्ण पदक जीतकर अमेरिकी ओलंपिक सपनों को साकार कर दिया था। वह सचमुच 'ड्रीम टीम' थी।

लेकिन, 2004 ग्रीष्मकालीन ओलंपिक (एथेंस, ग्रीस) तक पहुँचकर एक बार फिर से अमेरिका की बास्केटबॉल टीम लड़खड़ाने लगी थी, लेकिन अभी भी टिम डंकन, ली ब्रोन जेम्स, एलन इवेर्सेन, द्वायाने वाडे व कार्मेलो एंथोनी जैसे बड़े नाम टीम में मौजूद थे। फिर भी, अमेरिका बास्केटबॉल टीम पहली ही प्रतियोगिता में पोटों रीको से 19 अंकों से हार गई थी। यह अंतरराष्ट्रीय खेल के इतिहास में संयुक्त राज्य अमेरिका के बास्केटबॉल टीम के लिए सबसे बड़ा एकतरफा नुकसान था। हालाँकि अमेरिकी टीम चंद नजदीकी प्रतियोगिताओं को जीतकर कुछ समय के लिए अपना दबदबा कायम करती हुई नजर आई थी, लेकिन जल्द ही लिथुआनिया और बाद में अर्जेंटीना से हारकर मैदान से बाहर हो गई थी। इन तीन प्रतियोगिताओं में उनका वह घाटा, 2004 से पहले के सभी ओलंपिक के संयुक्त घाटे से भी अधिक था। यह बास्केटबॉल इतिहास की तीसरी असफलता थी, जब अमेरिका ओलंपिक में स्वर्ण पदक नहीं जीत सका था, लेकिन यह पहला मौका था, जब पेशेवर खिलाड़ियों से गठित अमेरिकी टीम स्वर्ण पदक हासिल करने में विफल रही थी।

2004 ओलंपिक में अमेरिकी हार ने एक बार फिर से उन सामूहिक कार्य सिद्धांतों की जरूरत को साबित किया था, जिनका पालन करना हरेक सपने पूरा करनेवाले कार्य-समूह के लिए जरूरी माना जाता है। पहला, यह कि व्यक्तिगत प्रतिभा ही किसी कार्य-समूह को सफल बना पाने के लिए काफी नहीं होती; और दूसरा, यह कि सिर्फ तकनीकी विशेषज्ञता ही किसी कार्य-समूह को ऐतिहासिक विजय नहीं दिला सकती। वैसे तो दुनिया भर के खेल विशेषज्ञों ने इसके कई कारण गिनाए हैं, लेकिन उनमें निम्नलिखित बातें किसी भी कार्य-समूह की सफलता को सुनिश्चित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण हैं—

नेतृत्वकर्ता:

चाहे वह खिलाड़ियों का समूह हो या फिर अन्य क्षेत्रों के पेशेवरों का, उसकी सफलता सबसे अधिक इस तथ्य पर निर्भर करती है कि उसे किस प्रकार का आंतरिक व बाह्य नेतृत्व प्रदान किया जा रहा है? कार्य-समूह के अंदर

के नेतृत्वकर्ता के लिए चरित्रवान होना और अपने सदस्यों की अपेक्षाओं पर खरे उतरना बहुत जरूरी होता है। यही आंतरिक नेतृत्वकर्ता अपने समूह को उत्साहित करने, चुनौती देने, हरेक साथी के सबसे अच्छे व्यक्तिगत गुणों को बाहर निकालने, उन्हें चमकाने और फिर उन सभी शक्तियों को एकजुट कर सामूहिक-शक्ति में बदलने के लिए जिम्मेदार होता है। यही आंतरिक नेतृत्वकर्ता ही ऐसा कार्यस्थल-वातावरण तैयार करता है, जिसमें समूह के हर सदस्य का मूल्यांकन होता है और उसे अपनी पूरी क्षमता तक पहुँचने का अवसर मिलता है।

इसके साथ ही, बाह्य नेतृत्वकर्ता यानी प्रशिक्षक (कोच) व संरक्षक (मेंटर) भी कार्य-समूहों की सफलता को उतना ही प्रभावित करता है। हालाँकि ये प्रशिक्षक (कोच) व संरक्षक संबंधित कार्य-समूह की दैनिक गतिविधियों को तो नियंत्रित नहीं करता है, लेकिन उसकी दिशा निर्धारित करने व सामूहिक मूल्यांकन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आंतरिक नेतृत्वकर्ता की तरह ही बाह्य नेतृत्वकर्ता के लिए भी यह बहुत जरूरी होता है, उसकी कथनी व करनी में कोई अंतर नहीं हो। यदि नेतृत्वकर्ता खुद ही अपनी बातों पर अमल नहीं करता तो वह कार्य-समूह के सदस्यों को भी कुछ नहीं सिखा सकता। याद रहे कि कार्यकर्ता अपने नेतृत्व का ही अनुसरण करता है।

प्रतिभा :

यदि आप अपने सपनों का कार्य-समूह गठित करने जा रहे हैं तो आपको उसी की जरूरतों के मुताबिक प्रतिभाशाली लोगों का चुनाव करना होगा। प्रतिभावान व्यक्ति-विशेष अपने कार्य-समूह में न केवल अपनी तकनीकी विशेषज्ञता लाते हैं, बल्कि वे जुनून व मजबूत कार्य-नीति का योगदान करते हैं और उत्कृष्टता हासिल करने के लिए जी-जान से उच्च कार्य-प्रदर्शन की कोशिशें भी करते हैं। हाँ, प्रतिभाशाली लोगों के चयन के समय उनकी प्रतिभा के साथ उनके दृष्टिकोण, व्यवहार व चरित्र को बराबर महत्व दिया जाना भी बहुत जरूरी है। क्योंकि हमें हमेशा यह कहावत याद रखनी चाहिए कि एक सड़ी मछली सारे तालाब को गंदा कर सकती है।

उद्देश्य :

कार्य-समूह के हर सदस्य के लिए यह समझना बहुत जरूरी होता है कि उसकी भूमिका क्या है; उसे वह काम क्यों करना चाहिए, जो कि उसे करने के लिए दिया गया है? और उस कार्य का निजी स्वार्थपूर्ति के अलावा बड़ा उद्देश्य क्या है? यह समझदारी कार्य-समूह के सदस्यों के क्षमता-निवेश के स्तर को प्रभावित करती है। इसके अलावा, उद्देश्य की एकता कोशिशों के दोहराव से भी बचाव करती है और नेक नीयत से काम करनेवाले सदस्यों की सामूहिक-कोशिशों को कई दिशाओं में खींचने से भी रोकती है। यहाँ सावधान रहने की जरूरत है कि कोई भी सदस्य सामूहिक उद्देश्य की प्राप्ति की बजाय अपने निजी स्वार्थपूर्ति पर ज्यादा ध्यान न दे। यहाँ पर महात्मा गांधी का यह वचन ध्यान में रखना बहुत जरूरी है कि “अपने विशेष कार्य के प्रति दृढ़-संकल्प से प्रज्वलित आत्माओं की छोटी संस्था भी इतिहास की धारा को बदल सकती है।”

संचार :

वैसे तो अच्छा संचार किसी भी कार्य-समूह की सफलता की चाबी है, लेकिन यह सपने सच करने की कोशिशों में जुटे कार्य-समूहों के लिए बेहद जरूरी है। प्रभावपूर्ण कार्य-समूहों के सदस्य अपने अन्य साथियों के साथ भी अच्छी तरह से बातचीत करने में सक्षम होते हैं। वे प्रतिक्रियाओं को स्वीकार करने व दूसरों के विचारों के लिए खुले होने के साथ-साथ टकराव उभरने पर प्रभावी ढंग से व सम्मान के साथ संवाद करने की क्षमता रखते हैं। कार्य-समूह संचार का एक और महत्वपूर्ण पहलू है, जिसे आमतौर पर बहुत ही कम महत्व मिलता है और अधिकतर नेतृत्वकर्ता जिसे नजरअंदाज करने की कोशिश करते हैं, वह है—अपने साथियों के विचारों को सुनना।

जब हम अपने साथियों की बातों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, तो यह उनके प्रति ईमानदारी, सम्मान व स्वीकृति की भावना को प्रदर्शित करता है, लेकिन ध्यान रखने की बात यह भी है हम बातूनीयों से भी बचें; वैसे लोगों पर विशेष नजर रखें, जो खुद को सर्वज्ञानी के रूप में प्रस्तुत करते हों। किसी भी कार्य-समूह के लिए इससे ज्यादा अपमान की स्थिति नहीं हो सकती कि उसका कोई सदस्य यह कहे कि वही सबकुछ जानता है!

आपसी सहयोग : सामूहिक कार्य की सफलता में आपसी सहयोग का अहम महत्त्व है। सामूहिक कार्य का सीधा-सादा अर्थ ही है—आपसी सहयोग से काम करना, लेकिन इसका मतलब सिर्फ इतना नहीं है कि हम एक साथ मिलकर ठीक प्रकार से काम करें। इसका मतलब यह है कि कार्य-समूह के सदस्य होने के नाते हम दूसरे साथियों के कार्यों का पूरक बनने में कितना योगदान करते हैं, हम आपसी संबंधों का कितना आदर करते हैं और अपने साथियों के विचारों व सुझाव को कितना महत्त्व देते हैं? इतना ही नहीं, आपसी सहयोग का मतलब यह भी है कि हम अपने दूसरे साथियों को किस प्रकार से उत्साहित करते हैं? कार्य-समूह के गठन के समय यह ध्यान देने की विशेष जरूरत है कि उम्मीदवार 'मैं' में ज्यादा भरोसा करता है या 'हम' में?

चरित्र :

किसी भी सपने को पूरे करनेवाले कार्य-समूह के सदस्यों के लिए ईमानदारी, निष्ठा, नैतिक व्यवहार व विश्वास आवश्यक चारित्रिक लक्षण हैं। व्यक्ति-विशेष का चरित्र ही यह रहस्य उजागर करता है कि वह किन चीजों को महत्त्व देता है और किन्हें नहीं! यह इतना महत्त्वपूर्ण क्यों है? क्योंकि, व्यक्ति-विशेष के चरित्र का प्रभाव कार्य-समूह की सीमाओं को लाँघकर काफी दूर तक जा सकता है। यह संगठन व उसकी प्रतिष्ठा को प्रभावित कर सकता है। यही कारण है कि सेनाओं के भरती में व्यक्ति-विशेष के चरित्र को सबसे पहले स्थान पर रखा जाता है।

मनोदृष्टि :

व्यक्ति-विशेष की मनोवृत्ति (एट्टीट्यूड) ही किसी भी कार्य-समूह की सफलता का सबसे अहम निर्धारक तत्त्व (डिटरमाइनिंग फैक्टर) है। यह कार्य-समूह के लिए ऊर्जा-स्रोत का काम भी कर सकती है और किसी कार्य-समूह को अंदर-ही-अंदर खोखला कर बरबाद कर देनेवाला कैसर भी है तो कार्य-समूह के गठन में व्यक्ति-विशेष की मनोवृत्ति का मूल्यांकन भी बहुत जरूरी होता है। यदि एक भी सदस्य नकारात्मक मनोदृष्टि (नेगेटिव एट्टीट्यूड) वाला व्यक्ति प्रवेश पा गया, तो उस कार्य-समूह का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। हाँ, यदि हम अपने कार्य-समूह में सकारात्मक मनोदृष्टि (पॉजिटिव एट्टीट्यूड) वाले सदस्यों को भर पाने में सफल हो जाते हैं, तो फिर हमारे सपने के सच होने के सारी बाधाएँ बेकाम साबित होंगी, क्योंकि सकारात्मक मनोदृष्टि व्यक्तियों का कार्य-समूह कभी भी किसी साथी को निरुत्साहित नहीं होने देता और हमेशा हर चुनौती से डटकर मुकाबले के लिए तैयार रहता है।



अध्याय-5

सामूहिक कार्य का रहस्य

“हम सब एक साथ काम कर रहे हैं, यही रहस्य है।”

—सैम वाल्टन

पिछले अध्यायों में हमने सामूहिक कार्य के महत्त्व, प्रभाव व जादू और सपनों के कार्य-समूह के बारे में पढ़ा है। जैसा कि उपरोक्त उद्धरण में वालमार्ट के संस्थापक सैम वाल्टन ने कहा है, ‘सामूहिक कार्य का रहस्य ही यही है कि हम सब एक साथ काम करने के लिए ही पैदा हुए हैं और हमारा एक साथ होना ही हमारे जीवन की सफलता है।’ लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह है कि हम एक-दूसरे के साथ काम क्यों करते हैं? वह कौन सा तत्त्व है, जो हमें समूह में काम करने के लिए प्रेरित करता है। इसका जवाब है—सुरक्षा महसूस करने की जरूरत।

आपसी सहानुभूति का मूल्य

हम आमतौर पर रेखीय पदानुक्रम (लीनियर हाइआर्की) में ही काम करते हैं। इसीलिए हम स्वाभाविक रूप से यह चाहते हैं कि हमारे ऊपर बैठा व्यक्ति हमारे काम को देखे। हम मान्यता व पुरस्कार के लिए अपना हाथ ऊपर उठाते हैं। हममें से अधिकांश खुद को उतना ही अधिक सफल महसूस करते हैं, जितनी अधिक मान्यता हमें अपनी कोशिशों के लिए अपने प्रभारियों से मिलती है, लेकिन इस तरह की प्रणाली तभी तक काम कर पाती है, जब तक कि हमारे कार्यों की निगरानी करनेवाला व्यक्ति हमारे संगठन में मौजूद रहता है और ऊपर से किसी प्रकार का दबाव महसूस नहीं करता, लेकिन यह कोई मानक प्रणाली नहीं है और इसे हमेशा बनाए रखना भी संभव नहीं हो पाता है।

अब जरा सेना में काम करनेवाले व्यक्तियों के बारे में सोचिए। क्या वे मान्यता व पुरस्कार के लिए काम करते हैं? जब वे अपनी जान जोखिम में डालते हैं तो क्या वे यह उम्मीद करते हैं कि ऊपर बैठा अधिकारी उसके काम से खुश होकर उसे शाबाशी देगा या पदोन्नति करेगा? बिल्कुल नहीं। सैनिकों की सफलता की इच्छाशक्ति व संगठन के हितों को आगे बढ़ाने के लिए काम करने की इच्छा, सिर्फ इस बात से प्रेरित नहीं होती है कि उन्हें अपने अधिकारियों से मान्यता मिलेगी। ये सब चीजें सेनाओं की त्याग व सेवा की कार्य-संस्कृति का अहम हिस्सा हैं, जहाँ सुरक्षा संगठन के हर स्तर से प्रदान की जाती है।

आप सैनिकों से पूछकर देखिए कि वह कौन सी चीज है, जो उनमें खतरों से जूझने की हिम्मत प्रदान करती है? आप हैरान होंगे कि उन्हें जान पर खेल जाने की हिम्मत न तो उनके कठोर प्रशिक्षण या उनकी शिक्षा-दीक्षा या फिर उन्हें प्रदान की जानेवाली अत्याधुनिक हथियारों से ही मिलती है। जी हाँ, सैनिकों के चाहे कितने ही साजो-सामान क्यों न हों, लेकिन उनके पास अपने काम को करने की सबसे बड़ी पूँजी होती है सहानुभूति। आप सेना की वरदीवाले किसी स्त्री या पुरुष से पूछकर देख लीजिए कि वे अपने दूसरे साथियों को बचाने के लिए अपनी जान जोखिम में डालने के लिए क्यों तत्पर रहते हैं, तो यही एक जवाब मिलेगा, “क्योंकि, वे भी हमारे लिए ऐसा ही करते।”

तो क्या सैनिक आसमान से टपकते हैं? क्या वे इसी काम के लिए पैदा हुए हैं? हो सकता है कि कुछ लोग ऐसे भी हों, लेकिन जहाँ भी हम काम करते हैं, वहाँ की कार्य-स्थिति यदि सेनाओं जैसी हो तो हम भी अपने साथियों के लिए मर मिटने को तैयार हो सकते हैं। जी हाँ, हम सभी सैनिकों जैसे साहस व त्याग का प्रदर्शन करने की सामर्थ्य व योग्यता रखते हैं। हो सकता है कि हमें अपनी जान जोखिम में डालने या किसी और की जान बचाने के लिए न कहा गया हो, लेकिन फिर भी हम खुशी-खुशी अपने यश को साझा करने और अपने साथ काम करनेवालों की मदद करने के लिए तैयार हो जाएँगे, लेकिन इसकी शर्त यह है कि जहाँ हम काम करते हैं, वहाँ ऐसा माहौल है कि दूसरे भी हमारे लिए ऐसा करने को तत्पर हों! जब ऐसी स्थिति होती है, जब उस तरह के बंधन बनते हैं, तो फिर सफलता व गुजर-बसर की ऐसी मजबूत नींव स्थापित होती है, जो बड़ी-से-बड़ी धनराशि, यश या पुरस्कार से नहीं खरीदी जा सकती, लेकिन यह सब उसी कार्य-समूह व कार्यस्थल में संभव हो पाता है, जहाँ नेतृत्वकर्ता अपने कार्यदल के सभी साथियों के कल्याण को सुनिश्चित करता है। जब नेतृत्वकर्ता अपने कार्य-समूह के हितों की सुरक्षा करता है, तो बदले में सभी सदस्य भी एक-दूसरे की व संगठन की रक्षा व हितों को आगे बढ़ाने के लिए सबकुछ न्योछावर करने को तैयार रहते हैं।

जी हाँ, आपको सेनाओं जैसी आपसी सहानुभूतिवाली कार्य-संस्कृति हर उस संगठन में देखने को मिल जाएगी, जो सबसे बड़ी सफलताएँ हासिल करते हैं, जो अपने प्रतिस्पर्धियों की युक्तियों व नवाचारों को पटकनी देते हैं, जो संगठन के अंदर व बाहर दोनों से आदर प्राप्त करते हैं, जो कर्मचारियों की उच्चतम निष्ठा व न्यूनतम छँटनी को बनाए रखते हैं और जो लगभग हर प्रकार की मुसीबतों व चुनौतियों से मुकाबले की क्षमता रखते हैं। ऐसे सभी असाधारण संगठनों में हर स्तर के नेतृत्वकर्ता अपने मातहत काम करनेवालों के हितों की पूर्ण सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। इसीलिए उनके कार्य-समूहों के हर सदस्य भी अपने साथियों व संगठन के हितों की सुरक्षा के लिए कुछ भी कर गुजरने के लिए हमेशा तैयार खड़े रहते हैं, तो यह है आपसी सहानुभूति का मूल्य और एक साथ काम करने का पहला रहस्य!

कर्मचारी भी मनुष्य ही तो हैं

तो क्या जिन कार्यस्थलों में आपसी सहानुभूति को महत्त्व नहीं दिया जाता है, वहाँ पर कर्मचारी काम नहीं करते? बिल्कुल करते हैं, लेकिन वहाँ पर लोग सिर्फ काम ही करते हैं। वे घड़ी की सुई देखकर कार्य-स्थल पर पहुँचते हैं; घंटी बजने पर मशीन को चालू करते हैं; फिर जब लघु विश्राम की घंटी बजती है तो अचानक मशीनें बंद हो जाती हैं और लगभग सभी कर्मी अपनी जगह छोड़ देते हैं; कुछ लोग शौचालय की तरफ भागते हैं, तो कुछ चाय-कॉफी की दुकान की ओर; और कुछ बस यूँ ही अपनी जगह पर बैठे-बैठे सुस्ताते हैं। फिर विश्राम-समाप्ति की घंटी बजती है, तो सभी अपनी मशीनें चालू करते हैं और फिर से अपने काम पर जुट जाते हैं। फिर भोजनावकाश की घंटी बजती है। फिर काम शुरू होता है; फिर पहली पारी समाप्त होने की घंटी बजती है; सभी कर्मी अपनी मशीनें बंद कर कार्यस्थल से बाहर निकल जाते हैं। फिर दूसरी पारी शुरू हो जाती है। यही तो होता है लगभग अधिकांश कार्य-स्थलों पर।

वर्ष 1969 में यही माहौल था, जब रॉबर्ट एच 'बॉब' चैपमैन ने अपने पिता विलियम चैपमैन के अनुरोध पर विनिर्माण संयंत्रों (मैन्युफैक्चरिंग प्लांट) की निर्माता बैरी-वेहमिलर कंपनीज (सेंट लुइस, मिसौरी, अमेरिका) का कामकाज सँभाला था। इससे पहले बॉब लेखांकन प्रतिष्ठान प्राइस वाटरहाउस (अब, प्राइस वाटरहाउस कूपर्स, दुनिया की सबसे बड़ी चार लेखांकन कंपनियों में से एक) में लेखापाल (अकाउंटेंट) की नौकरी कर रहा था। 1975

में पिता की मृत्यु के बाद बॉब चैपमैन ने मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) व सभापति (चेयरमैन) की जिम्मेदारी सँभाली थी। उस वक्त तक बैरी-वेहमिलर मुख्य रूप से शराब संयंत्र का विनिर्माण कर रही थी और उसका सालाना कारोबार 1.80 करोड़ डॉलर था, हालाँकि उसके कामकाज सँभालने के एक महीने बाद ही बैंक ने कंपनी के वित्त-पोषण से अपना हाथ खींच लिया था, लेकिन बॉब ने लागत कटौती कर 1976 में 2.20 करोड़ डॉलर का कारोबार किया था।

आखिर, बॉब चैपमैन ने ऐसा कौन सा जादू किया था कि वित्तीय संकटों के बावजूद बैरी-वेहमिलर के कारोबार में 40 लाख डॉलर का इजाफा हो गया था? जी हाँ, बॉब चैपमैन ने वह किया था, जिसे अधिकांश नेतृत्वकर्ता अनसुना करते हैं। उसने अपने लोगों की बातें सुननी शुरू कर दी थीं और फिर बिना शोर मचाए ऐसे छोटे-छोटे बदलाव शुरू किए थे, जिससे कर्मियों के बीच आपसी सहानुभूति का माहौल बनने लगा था। असल में, जब चैपमैन ने काम सँभाला था तो उसने सबसे पहले कंपनी में 27 वर्ष पुराने वरिष्ठ कर्मचारी रोन कैपवेल से बातचीत का सिलसिला शुरू किया था, उसे अपने मन की बात कहने का मौका दिया था। चूँकि चैपमैन के पिता ने कभी कैपवेल की बातें सुनने की जहमत नहीं उठाई थी, इसीलिए कैपवेल घबरा गया था—कहीं सीएमडी को उसकी कोई बात बुरी लग जाए तो?

लेकिन, चैपमैन के आश्वस्त करने के बाद कैपवेल ने खुलकर अपनी बातें शुरू की थीं। उसने कहना शुरू किया था, “ऐसा लगता है कि जब तुम मुझे नहीं देखते हो, तो मुझ पर कुछ अधिक भरोसा करते हो, बजाय तब के, जब मैं बिल्कुल यहाँ होता हूँ।” असल में, कैपवेल अभी हाल में ही पोर्टो रिको के एक ग्राहक के संयंत्र का मुआयना करने के बाद मुख्यालय में वापस लौटा था और उसी के हवाले से ये बातें कह रहा था, “जब मैं बाहर ग्राहक की फैक्टरी में था, यहाँ की तुलना में मुझे ज्यादा आजादी थी। जब से मैं फैक्टरी में दाखिल हुआ हूँ, ऐसा लगता है मानो मेरी सारी आजादी फिसल गई। मुझे लगता है कि किसी ने मुझ पर अपना अँगूठा रख दिया है। जब मैं अंदर आया था, तब मुझे समय-घड़ी में अपना छिद्र-पत्रक (पंच कार्ड) घुसाना पड़ा था; और फिर जब मैं दोपहर के खाने के लिए गया, वापस आया था और जब मैंने अपना दिन पूरा किया था, तब मुझे बाहर ऐसा नहीं करना पड़ता था।”

चैपमैन ने कभी ऐसी बातें नहीं सुनी थीं। उसे ऐसा लग रहा था, मानो सीएमडी की कुरसी पर बैठकर भी वह अपने फैक्टरी कर्मियों के बारे में कुछ भी नहीं जानता था। उसने कैपवेल को अपने दिल की बातें कहने के लिए प्रोत्साहित किया था। कैपवेल ने आगे बोलना शुरू किया था, “मैं अभियंताओं, लेखपालों व अन्य लोगों के साथ एक ही दरवाजे से अंदर आता हूँ। वे बाएँ दफ्तर की तरफ मुड़ जाते हैं और मैं सीधे फैक्टरी में चला जाता हूँ और हमारे साथ बिल्कुल अलग व्यवहार किया जाता है। आप उन लोगों के फैसले पर भरोसा करते हो कि सोडा या कॉफी लें या अल्पावकाश लें; लेकिन हमें घंटी बजने तक इंतजार करने को मजबूर करते हो!” चैपमैन चुपचाप उसकी बातें सुनता रहा था, लेकिन वह अंदर ही अंदर परेशान हो गया था।

कैपवेल ने चैपमैन को बताया था कि संयंत्र के अन्य कर्मचारी भी उसके जैसा ही महसूस कर रहे थे। कैपवेल ने चैपमैन के सामने यह रहस्य खोला था कि एक ही फैक्टरी के भीतर दो अलग-अलग कंपनियाँ चल रही थीं : एक संयंत्र के अंदर और दूसरा मुख्यालय दफ्तर में। चैपमैन को अब समझ में आया था कि शीर्ष प्रबंधन चाहे जितनी भी कोशिशें करने का दावा करता रहा हो, क्रूर सच्चाई यह थी कि संयंत्र में मशीनों के सामने खड़े होकर काम करनेवाले कामगार यह नहीं महसूस कर पा रहे कि कंपनी उन पर भी उतना ही भरोसा करती है, जितना कि दफ्तर में बैठनेवाले कर्मचारियों पर। चैपमैन को जल्द ही पता चल गया था कि फैक्टरी के कामगार ऐसा क्यों महसूस कर

रहे थे? कैपवेल ने चैपमैन के सामने चौंकानेवाला तथ्य पेश किया था कि दफ्तर में बैठनेवाले कर्मचारी बिना किसी से पूछे कभी भी फोन कर अपने परिवार का हाल-चाल पूछ सकते थे, जबकि इसी काम के लिए फैक्टरी के कामगारों को अनुमति लेने की जरूरत पड़ती थी।

कैपवेल की बातें सुनने के बाद, चैपमैन ने कार्मिक विभाग के प्रमुख को बुलाया था और निर्देश दिया था कि समय-घड़ी को तत्काल बंद किया जाए और विभिन्न अवकाशों के लिए घंटी बजाने की प्रथा को भी खत्म कर दिया जाए। साथ ही, दफ्तर की अन्य सामान्य सुविधाओं के लिए भी कामगारों को अनुमति से मुक्त कर दिया जाए। उसी समय चैपमैन ने मन-ही-मन फैसला कर लिया था कि अब के बाद कामगारों से भेदभाव दर्शानेवाला कोई नियम-कानून नहीं रहेगा और वह हर हाल में कामगारों का अटूट विश्वास हासिल करके ही दम लेगा। ये बहुत ही क्रांतिकारी फैसले थे, लेकिन चैपमैन ने इन्हें बहुत ही गुपचुप तरीके से लागू किया था। चैपमैन को पता था कि ज्यों ही कंपनी में आपसी सहानुभूति पैदा करनेवाली कोशिशें शुरू होंगी, आपसी विश्वास का नया मानक बन जाएगा।

चैपमैन ने यह सुनिश्चित करने के लिए कि चाहे वे फैक्टरी के कामगार हों या फिर कार्यालय के कर्मचारी, सभी के साथ मनुष्य जैसा एक समान व्यवहार किया जाए। कई अन्य जरूरी बदलाव भी किए थे, जैसे—हमेशा से मशीनों के अतिरिक्त कल-पुर्जों को तालाबंद जालीदार कमरों में रखा जाता। जब किसी कामगार को पुर्जों की जरूरत होती थी तो उन्हें जालीदार कमरों के बाहर पंक्ति में खड़ा होना पड़ता था और अपनी बारी आने के बाद अंदर बैठे कर्मचारी के सामने अपनी माँग रखनी पड़ती थी। कामगारों को उस जालीदार कमरे में जाने की अनुमति नहीं थी। कंपनी के प्रबंधन ने यह व्यवस्था कल-पुर्जों की चोरी को रोकने के लिए बनाई थी। इस व्यवस्था से भले ही चोरी को रोकने की कोशिश की गई थी, लेकिन यह सख्त चेतावनी भी थी कि शीर्ष प्रबंधन कामगारों पर भरोसा नहीं करता था। चैपमैन ने उन कमरों से ताला हटाने का और कामगारों को अपने आप जरूरी कल-पुर्जे लेने का आदेश जारी कर दिया था।

इतना ही नहीं, चैपमैन ने फैक्टरी के भीतर स्थापित भुगतान-दूरभाषों (पे फोन) को बाहर कर दिया था और कामगारों के उपयोग के लिए कंपनी की तरफ से कई दूरभाष लगवा दिए थे। अब किसी कामगार को निजी बातचीत के लिए न तो सिक्कों की जरूरत थी और न ही किसी से अनुमति लेने की। वे जब चाहे, किसी से भी बातचीत कर सकते थे। अब मुख्यालय के कर्मचारियों व संयंत्र के कामगारों के भेद को पूरी तरह खत्म कर दिया गया था। कंपनी में काम करनेवाला कोई भी व्यक्ति मुख्यालय के किसी भी दरवाजे या संयंत्र के किसी भी हिस्से में अपनी मरजी से किसी भी समय आने-जाने के लिए स्वतंत्र था। बिल्कुल कोई रोक-टोक नहीं; सभी कंपनी के थे और कंपनी उनकी थी। शुरुआती हिचक के बाद जल्द ही यह एक सामान्य व्यवस्था बन गई थी। इस तरह, चैपमैन ने दिमाग से काम करनेवाले और हाथ से काम करनेवाले के बीच की हर प्रकार की भेदभावपूर्ण व्यवस्था को खत्म कर दिया था। अब सभी मनुष्य थे, न कि कर्मचारी, अधिकारी या कामगार।

इसका नतीजा क्या निकला था? बहुत ही कम समय में कंपनी एक परिवार की तरह बनने लगी थी। व्यवस्था में मामूली बदलावों से कंपनी के भीतर का माहौल बदल गया था। लोग भी वही थे, स्थान भी वही था, लेकिन उनके बीच का आपसी व्यवहार बदल गया था। सभी खुद को कंपनी से जुड़ा हुआ महसूस करने लगे थे; सभी को अपना महत्त्व नजर आने लगा था और सभी दूसरे को महत्त्व देने लगे थे। अब हर कोई दूसरे का खयाल रखने लगा था, क्योंकि दूसरा भी उसका खयाल रख रहा था। आपसी सहानुभूति के उस माहौल ने हर किसी को अपने काम में दिल व दिमाग दोनों झोंक देने के लिए मजबूर कर दिया था। अब संगठन उनका व उनके साथियों का खयाल रख रहा था और वे अपने साथियों व संगठन का खयाल करने लगे थे।

रोचक तथ्य यह है कि इस दौरान पेंट विभाग के एक कर्मचारी के ऊपर भारी मुसीबत आन पड़ी थी। उसकी पत्नी को मधुमेह था और उसकी टाँग कटवाने की नौबत आन पड़ी थी। उसे अपनी पत्नी की सहायता के लिए छुट्टी की जरूरत थी, लेकिन वह छुट्टी लेकर अपना वेतन कटवा सकने की स्थिति में भी नहीं था। शीर्ष प्रबंधन को इस बात का पता तब चल सका था, जब उस विभाग के अन्य कर्मचारियों ने अपनी बची छुट्टियाँ उक्त कामगार के खाते में स्थानांतरित करने का आवेदन किया था। इस तरह, उस कर्मचारी को वेतन कटवाने की जरूरत नहीं पड़ी थी और वह अपनी पत्नी की सहायता के लिए ज्यादा समय भी निकाल पाया था। हालाँकि यह सब कंपनी के घोषित नियमों का सरासर उल्लंघन था, फिर भी प्रशासनिक विभाग ने समय की जरूरत व कामगारों की सामूहिक भावना का आदर करते हुए उसके लिए विशेष प्रावधान करने का फैसला किया था।

ध्यान देने की बात है कि कामगारों ने सिर्फ अपने साथियों का ही खयाल नहीं रखा था, बल्कि वे अपनी मशीनों का भी ज्यादा ध्यान रखने लगे थे। इस कारण मशीनों की टूट-फूट कम हो गई थी, उनकी मरम्मत में कल-पुर्जों की लागत कम होने लगी थी और काम रुकने का समय काफी कम हो गया था। कंपनी को इसका यह लाभ मिला था कि संयंत्र के रख-रखाव की लागत काफी कम हो गई थी और उत्पादन भी बढ़ गया था। इतना ही नहीं, उत्पादों की गुणवत्ता में जादुई सुधार हुए थे; ग्राहक सेवाएँ ज्यादा फुर्तीली हो गई थीं; और जब पहला साल बीता तो पता चला था कि कंपनी का सालाना कारोबार पिछले साल के मुकाबले 40 लाख डॉलर ऊपर चला गया था। चैपमैन ने अतिरिक्त राजस्व का नई प्रौद्योगिकियों में निवेश किया था और अगले चार वर्षों में कंपनी का सालाना कारोबार 2.20 करोड़ डॉलर (1976) से बढ़कर 7.10 करोड़ डॉलर (1980) के स्तर पर पहुँच गया था।

चौकिए मत, अगले 35 वर्षों में बॉब चैपमैन ने दुनिया भर में कुल 70 कंपनियों का अधिग्रहण कर समूह के कारोबार को 10 सहायक कंपनियों में पुनर्गठित किया था; और, 2015 तक, बैरी-वेहमिलर को 1.8 अरब डॉलर का सालाना कारोबार करनेवाले विश्वव्यापी अभियांत्रिकी समूह में बदल दिया था। चैपमैन ने इस क्रांतिकारी कारोबारी यात्रा के अनुभवों को अपनी पुस्तक 'एवरीबॉडी मैटर्स' (अक्तूबर 2015) में दर्ज किया है।

चैपमैन का 'सच्चा मानवीय नेतृत्व'

बॉब चैपमैन ने अपने अद्भुत कारोबारी दर्शन को 'सच्चा मानवीय नेतृत्व' (टूली ह्यूमन लीडरशिप) नाम दिया है। चैपमैन बेधड़क यह घोषणा करता है, "जब लोगों को संगठन के अंदर के खतरों से निपटना पड़ता है, तब संगठन खुद भी बाहर से खतरों का सामना करने में कम सक्षम हो जाता है।"

तो सच्चा मानवीय नेतृत्व क्या करता है? चैपमैन का यही कहना है कि सच्चा मानवीय नेतृत्व अपने संगठन की कार्य-संस्कृति को तहस-नहस कर देनेवाली आंतरिक प्रतिद्वंद्विता से सुरक्षित रखता है। जब एक संगठन या कार्य-समूह में हमें एक-दूसरे से सावधान रहना पड़े, अपनी रक्षा करनी पड़े, तो हम अपने समूह या संगठन के बारे में क्या कुछ पाएँगे? इसके उलट, यदि संगठन या समूह के अंदर विश्वास व आपसी सहयोग की भावना को पनपने का मौका मिलता है, तो हम एक-दूसरे को नजदीक खींचने लगते हैं; हमारे बीच सच्ची सहानुभूति का माहौल कायम होता है, हम सभी अपने काम में दिल व दिमाग दोनों झोंकने लगते हैं; उत्पादन बढ़ता है, सेवाएँ सुधरती हैं, कारोबार बढ़ता है और हमारा संगठन पहले से ज्यादा मजबूत होकर सामने आता है।

चैपमैन सीधे तौर पर यह तो नहीं कहता है कि सच्चे मानवीय नेतृत्व के अभाव में ही आजकल के अधिकांश कारोबारी संगठन आंतरिक प्रतिद्वंद्विता की भयानक बीमारी के शिकार हैं, लेकिन उसका इशारा साफ है। इस बात की बहुत अधिक आशंका है कि आप जिस कारोबारी संगठन के लिए काम कर रहे हों, वह भी इसी संकट से जूझ

रहा हो! वैसे, किसी भी संगठन के नेतृत्व से बात कर देखिए, सभी यही दावा करते हैं कि वे आदर्श मानव-संसाधन प्रबंधन प्रणाली (ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट सिस्टम) पर काम कर रहे हैं। तो फिर, अधिकांश कंपनियाँ अपने कर्मचारियों को साथ बनाए रख पाने में क्यों विफल हो रही हैं; 'कार्य संतुष्टि' (जॉब सटिस्फैक्शन) के अभाव में अधिकतर कर्मचारी मानसिक रोगों के शिकार क्यों बन रहे हैं; और भारी सार्वजनिक पूँजी झोंकने के बावजूद बड़ी-बड़ी निगमित कंपनियों की अधिकांश परियोजनाएँ क्यों विफल हो रही हैं? इन सभी सवालों का जवाब चैपमैन के कथन में मिलता है कि अधिकांश कंपनियाँ सच्चे अर्थों में मानवीय नेतृत्व नहीं प्रदान कर पा रही हैं। क्या यही कारण नहीं है कि दुनिया भर में एक तरफ करोड़ों कमानेवाले शीर्ष पेशेवर नेतृत्व की सूची लंबी होती जा रही है, तो दूसरी तरफ बेरोजगारों की संख्या भी बढ़ती जा रही है?

लेकिन आपसी प्रतिद्वंद्विता के इस भयानक दौर में भी बॉब चैपमैन जैसा व्यक्ति उभरकर सामने आता है; वह सच्चे मानवीय नेतृत्व को अपने कारोबारी सपनों का आधार बनाने की हिम्मत जुटाता है और फिर अपनी आश्चर्यकारी उपलब्धियों से दुनिया को चौंकाता है। तो चैपमैन को ऐसा कौन सा रहस्य पता चल गया था कि उसने अपने भीतर सच्चे मानवीय नेतृत्व को उभरने का मौका दिया था? जी हाँ, उसने मानव शरीर-रचना विज्ञान (ह्यूमन एनाटोमी) के आधारभूत तत्त्वों को बारीकी से समझने की कोशिश की थी। उसे पता चला था कि मानव शरीर के अंदर वैसी हर प्रकार की प्रणालियाँ मौजूद हैं, जो इस प्रजाति को जीवित बने रहने व फूलने-फलने में मदद करती हैं।

यही कारण है कि हजारों वर्ष पहले जब अन्य सभी आदिम प्रजातियाँ खत्म होती चली गई थीं, तब भी मानव प्रजाति न केवल खुद को जिंदा रख पाने में सफल रही थी, बल्कि हर संकट के बाद पहले से ज्यादा मजबूत बनकर उभरी थी। रोचक तथ्य यह भी है कि अन्य प्रजातियों की तुलना में मानव का अस्तित्व-काल अपेक्षाकृत काफी कम रहा है, फिर भी वह सबसे ज्यादा सफल रहा है और पृथ्वी ग्रह पर एकमात्र अद्वितीय स्तनधारी प्राणी है और सच्चाई यह है कि मानव प्रजाति इतना अधिक सफल रही है कि उसका हर फैसला पृथ्वी ग्रह के अन्य सभी प्राणियों के जीवित रहने या फूलने-फलने की क्षमता को प्रभावित करता है। इससे भी आगे बढ़कर, कुछ मानव समुदाय इतने शक्तिशाली हो गए हैं कि अपनी ही प्रजाति के अन्य मानव समुदायों के अस्तित्व की क्षमता को प्रभावित करने लगे हैं।

इस तरह, मानव प्रजाति के अंदर की प्रणालियाँ हमारी न केवल बाहरी खतरों से रक्षा करती हैं, बल्कि हम जिस भी माहौल में रहते व कार्य करते हैं, उसमें हमारे सर्वोत्तम हितों के लिए जरूरी व्यवहार को दोहराने के लिए उत्साहित करती हैं। इसीलिए जब हम खतरा महसूस करते हैं तो हमारी आंतरिक प्रतिरक्षा प्रणाली तेज हो जाती है और हम सचेत व्यवहार करने लग जाते हैं। इसके उलट, जब हम अपने लोगों या समुदायों या संगठनों में खुद को सुरक्षित महसूस करते हैं, तो हमारी आंतरिक प्रणाली स्वाभाविक आराम की स्थिति में आ जाती है और हम दूसरों पर विश्वास व सहयोग करने के लिए ज्यादा खुल जाते हैं।

उच्च कार्य-प्रदर्शन करनेवाले संगठनों, जहाँ पर काम पर आने के बाद लोग खुद को सुरक्षित महसूस करते हैं, के अध्ययन कुछ चौंकानेवाले तथ्य उजागर करते हैं। वहाँ की कार्य-संस्कृतियाँ बिल्कुल उन्हीं भयानक परिस्थितियों का सादृश्य निर्माण करती हैं, जिनमें कार्य करने के लिए आदिम मानव प्रजाति की रचना हुई थी। जी हाँ, मानव प्रजाति का उत्थान व विकास कभी भी शांतिपूर्ण माहौल में नहीं हुआ है। मानव प्रजाति हमेशा से ही ऐसी शत्रुतापूर्ण व प्रतिस्पर्धी दुनिया में काम करती आ रही है, जहाँ पर प्रत्येक समूह अनंत संसाधनों को हासिल करने की कोशिशों में जुटा रहा है। तो हमारे अंदर की जो प्रणालियाँ हमें उन भीषण परिस्थितियों में एक प्रजाति के रूप जीवित रहने व

फलने-फूलने में मदद करती रही हैं, वही प्रणालियाँ संगठनों को भी जीवत रहने, फलने-फूलने व महान् उपलब्धियाँ हासिल करने में मदद करती हैं।

तो सामूहिक कार्य की सफलता का रहस्य न तो तथाकथित आधुनिक प्रबंधन-सिद्धांतों में छुपा हुआ है और न ही सपने साकार करनेवाले कार्य-समूहों में। यह बस जीव विज्ञान (बायोलॉजी) व मानव विज्ञान (एंथ्रोपोलॉजी) का विषय है। यदि कुछ निश्चित शर्तें पूरी कर दी जाती हैं, तो किसी भी संगठन के भीतर लोग खुद दूसरों के बीच में सुरक्षित महसूस करने लगते हैं; और फिर वे उन चीजों को हासिल के लिए दूसरों के साथ मिलकर काम करने लग जाते हैं, जो उन्होंने कभी अकेले हासिल नहीं किया होता है। नतीजा यह निकलता है कि वह संगठन तमाम प्रतिस्पर्धियों के बीच अपना झंडा बुलंद करने लगता है।

यही कुछ तो बॉब चैपमैन ने अपनी कंपनी बैरी-वेहमिलर में किया था। उसने अपनी फैक्टरी के कार्य-वातावरण में बदलाव के लिए कोई भारी-भरकम योजना नहीं बनाई थी, बल्कि मामूली से बदलाव किए थे, जो जीव विज्ञान की सामान्य शर्तों को पूरा करते थे। उसके चलते कंपनी में जो नई कार्य-संस्कृति विकसित हुई थी, वह कार्य-समूहों को अपने सदस्यों के अंदर सर्वोत्तम बाहर निकालने में सक्षम बनाती थी। तो चैपमैन या उनके जैसे अन्य लोग अपने कार्य-समूहों या उनके अंदर के लोगों को बदलने की कोशिश नहीं करते, बल्कि उन कार्य-परिस्थितियों में बदलाव कर देते हैं। आखिर चैपमैन जैसे लोग वैसी कार्य-संस्कृतियाँ बनाने में क्यों सफल हो जाते हैं, जो अपने लोगों को अपना सबकुछ दे देने के लिए प्रेरित करती हैं? इसका सीधा जवाब इस तथ्य में छुपा हुआ है कि हम वही करते हैं, जो हम करना चाहते हैं। मतलब, चैपमैन जैसे लोग अपने कार्यस्थल से खुद भी प्यार करते हैं; और अपने आसपास वैसा ही स्वाभाविक मानवीय वातावरण का निर्माण करते हैं, जिसमें वह खुद को भी आनंदित महसूस करते हैं।

अब सवाल यह उठता है कि हम जो भी करते हैं, वह क्यों करते हैं? अपनी शारीरिक संरचना पर ध्यान दीजिए, तो आपको आसानी से पता चल जाएगा कि हमारे अंदर सारी प्रणालियों का विकास हमें भोजन खोजने, जीवित रखने व अपनी प्रजाति को उन्नत बनाने में मदद करने के लिए हुआ है। वैसे, ज्यों-ज्यों मानव सभ्यता विकसित होती गई है, वैसे-वैसे हमारी भोजन खोजने व खुद को सुरक्षित रखने की व्यस्तताएँ कम होती चली गई हैं। अब हम कम-से-कम कंदराओं में रहनेवाले आदिम मानव प्रजाति की तरह तो नहीं ही हैं। अब हमें शिकार करके भोजन इकट्ठा करने की जरूरत नहीं पड़ती। अब हमें न तो खुद को जंगली जानवरों के भोजन बन जाने से और न ही दूसरे मानव समूहों से अपने भोजन को सुरक्षित रखने की जरूरत पड़ती है। आधुनिक समाज में हमारी जरूरतें भी बदल गई हैं और सफलता के पैमाने भी। अब पेशेवर जीवन की उन्नति, खुशी व संतुष्टि ढूँढ़ने की कोशिशें ही हमारी सफलता की परिभाषा बन गई हैं। यदि हम अपने शरीर की आंतरिक कार्य-प्रणालियों को गौर से देखें तो साफ पता चलता है कि वे आज भी हजारों साल पहले आदिम मानव की तरह ही परिचालित हो रही हैं। हमारा आदिम दिमाग अभी भी अपने आसपास की दुनिया को अपनी भलाई या सुरक्षा प्राप्ति के अवसरों के खतरे के संदर्भ में ही देखती है। यदि हम समझ लेते हैं कि ये प्रणालियाँ किस प्रकार काम करती हैं, तो हम अपने लक्ष्यों तक पहुँच सकने के लिए खुद को बेहतर उपकरणों से लैस कर सकते हैं। साथ ही, हम जिन समूहों में काम करते हैं, उन्हें भी सफल व उन्नतिशील बनाने के लिए ज्यादा सक्षम बना सकते हैं।

लेकिन, आज की आधुनिक दुनिया में भी, जब हमने मानव संसाधन विकास व प्रबंधन की तथाकथित उन्नत प्रणालियाँ विकसित कर ली हैं, ऐसी कंपनियों व संगठनों की संख्या बहुत कम है, जो सचमुच में अपने कर्मचारियों का विश्वास हासिल कर पाने में और उन्हें अपना सबकुछ देने के लिए सुरक्षित माहौल दे पाने में सफल हो रही हैं। हकीकत यही है कि बहुसंख्यक कंपनियों व संगठनों की कार्य-संस्कृति के मानदंड हमारे स्वाभाविक जीव-वैज्ञानिक

झुकावों के खिलाफ काम करती हैं। यही कारण है कि खुश, प्रेरित व परिपूर्ण महसूस करनेवाले कर्मचारियों को ढूँढ़ पाना बहुत ही मुश्किल होता जा रहा है। पेशेवर सेवाएँ देनेवाले बहुराष्ट्रीय प्रतिष्ठान डेलॉयट के कार्य-संतुष्टि सर्वेक्षणों के मुताबिक दुनिया भर में 80 प्रतिशत से अधिक कर्मचारी अपनी नौकरियों से असंतुष्ट हैं। अब जरा कल्पना कीजिए कि जब काम करनेवाले लोग अपने कार्यों से ही संतुष्ट नहीं हैं, तो वे कैसा कार्य-उत्पादन कर पा रहे होंगे; और वे जिन कंपनियों व संगठनों में नियुक्त हैं, उनका कारोबारी प्रदर्शन कैसा होता होगा? फिर भी, हम कंपनियों की सफलताओं को वर्षों या दशकों में नहीं, बल्कि तिमाही नतीजों से नापते हैं।

अब सबसे बड़ा सवाल यह है कि यदि हमारा कारोबारी माहौल लोगों की बजाय छोटी अवधि के नतीजों व लाभराशि पर केंद्रित है, तो हमारा विश्व समाज किस दिशा में आगे बढ़ रहा है? जब हमें कार्यस्थलों में खुशी व अपनापन ढूँढ़ने के लिए संघर्ष करना पड़ता है तो हम उस संघर्ष को भी अपने घर के अंदर घसीट लाते हैं। तो क्या आधुनिक मानव समाज इसी विनाशकारी उपलब्धि के लिए संघर्ष कर रहा है? बिल्कुल नहीं। यह अपवाद नहीं, बल्कि नियम होना चाहिए कि अधिकतर लोग जब काम से घर लौटें तो खुद को प्रेरित, सुरक्षित, परिपूर्ण व आभारी महसूस करें। यह हमारा स्वाभाविक मानवाधिकार है और हम इसके हकदार हैं। यह कोई आधुनिक विलासिता नहीं है, जो चंद भाग्यशाली लोगों को उपलब्ध हो। जी हाँ, बॉब चैपमैन जब 'सच्चा मानवीय नेतृत्व' की बात करता है तो उसका मतलब यही है कि कर्मचारियों के साथ सचमुच में मानव जैसा व्यवहार हो, ताकि वे अपने स्वाभाविक मानवाधिकार को हासिल कर सकें। चैपमैन ने अपने संगठन में यही कुछ सुनिश्चित करने की कोशिश की है और ऐसी ही कोशिशें अन्य कंपनियों में की जाने की भारी जरूरत है और यही सामूहिक कार्य-संस्कृति की सफलता का रहस्य भी है।

आखिर ऐसा क्या हुआ था, जब बॉब चैपमैन को 'सच्चा मानवीय नेतृत्व' का बोध हुआ था? असल में, चैपमैन अपनी पत्नी के साथ गिरजाघर में आयोजित एक विवाह-समारोह को देख रहा था। दुल्हन को अपनी तरफ बढ़ता देख दूल्हा खड़ा हुआ था। उनमें एक-दूसरे के प्रति प्यार का एहसास साफ नजर आ रहा था। वहाँ मौजूद सभी ने उनकी इस भावना को महसूस किया था। फिर, सदियों से चली आ रही परिपाटी का पालन करते हुए पिता ने अपनी पुत्री का हाथ उसके भावी पति के हाथों में सौंप दिया था। चैपमैन को पहली बार इस पुरानी परिपाटी के पीछे का तर्क समझ आया था। एक पिता, जो अपनी बेटी की रक्षा के लिए कुछ भी कर सकता था, वही अब रस्मी तौर पर अपनी जिम्मेदारी किसी दूसरे के हाथों में सौंप रहा था। बेटी का हाथ सौंपने के बाद पिता वापस अपने आसन पर आ बैठा था। अब उसके चेहरे पर अद्भुत संतोष व भरोसे का भाव प्रकट हो रहा था। ऐसा लग रहा था, मानो उसने अपनी वर्षों की जिम्मेदारी को बिल्कुल सही हाथों में सौंप दिया था, जो अब आगे उसी की तरह उसकी बेटी की सुरक्षा करता रहेगा। चैपमैन को समझ में आ गया था कि यही बात हरेक कंपनी पर भी लागू होती है।

चैपमैन का मानना है कि हरेक कर्मचारी किसी का पुत्र व किसी की पुत्री है। हरेक माता-पिता अपने बच्चे को अच्छी जिंदगी, अच्छी शिक्षा व जिंदगी को खुशहाल बनानेवाले सारे हुनर सिखाने के लिए काम करते हैं, ताकि वे ईश्वर से आशीर्वाद के रूप में मिली अपनी सभी प्रतिभाओं का उपयोग कर पाने के काबिल बन सकें। उसके बाद जब वे माता-पिता अपने बच्चों के हाथ किसी कंपनी के हाथों में सौंपते हैं, तो उनकी उम्मीद यही होती है कि अब वह कंपनी भी उनकी ही तरह उन बच्चों की देखभाल करेगी। चैपमैन ने कई अवसरों पर कंपनी के संचालक होने के नाते अपनी इस महान् जिम्मेदारी को घोषित किया था, "वे हम लोग यानी कंपनियाँ हैं, जो अब उन अनमोल जिंदगियों के लिए जिम्मेदार हैं।"

यही तो किसी भी समूह, कंपनी या संगठन का नेतृत्वकर्ता होने का मतलब होता है। क्या ऐसी मजबूत धारणा के

बिना कोई नेतृत्वकर्ता अपने कार्य-समूहों के सदस्यों से उनका सर्वोत्तम निकाल पाने की उम्मीद कर सकता है? बिल्कुल नहीं। चैपमैन की धारणा भले ही समर्पित उपदेशकों जैसी लगती है, लेकिन क्या कोई नेतृत्वकर्ता अपने साथियों के पिता होने की जिम्मेदारी से बच सकता है? चैपमैन का स्पष्ट मत है कि नेतृत्वकर्ता अपने कर्मचारियों के लिए पिता की तरह ही होता है और जब वह अपने कर्मचारियों को पिता जैसी सुरक्षा प्रदान कर पाने में सक्षम होता है तो फिर कर्मचारी भी कंपनी को अपना नया घर समझने लगते हैं। जब कर्मचारियों को एहसास होता है कि कंपनी हर सुख-दुःख में उसके साथ खड़ी है, तो वे कंपनी को अपना परिवार व अन्य कर्मचारियों को अपने सगे समझने लगते हैं और जब ऐसा होता है तो वे अपनी निष्ठा को प्रकट करने लिए अपने परिवार की तरह कंपनी को भी अपनी पहचान बना लेते हैं। तब कंपनी व कर्मचारी का भेद मिट जाता है और काम पारिवारिक जिम्मेदारी बन जाता है और जब कर्मचारी अपनी कंपनी से परिवार व अन्य कर्मचारियों से सगे की तरह प्रेम करने लगता है, तभी सही मायने में कार्यस्थलों में सामूहिक कार्य-भावना का विकास होता है और कार्य-समूह अपने नेतृत्वकर्ता के सपने को पूरा कर पाता है।

आज के घोर पूँजीवादी युग में चैपमैन की बातें आध्यात्मिक प्रवचन जैसा लग सकती हैं, लेकिन बड़ी विडंबना यही तो है कि असल में पूँजीवाद भी तभी बेहतर तरीके से काम पाता है, जब उसे मानव शरीर विज्ञान के आधार पर लागू किया जाता है। मतलब, जो पूँजीवादी व्यवस्था मनुष्य को अपनी जिम्मेदारियों को पूरा कर पाने का मौका देती है, वही ज्यादा कामयाब होती है। असल में, पूँजीवाद ऐसी आर्थिक व राजनीतिक प्रणाली है, जिसमें किसी देश का व्यापार व उद्योग सरकार की बजाय निजी मालिकों द्वारा लाभ के लिए नियंत्रित किया जाता है। हम इस परिभाषा का सही अर्थ निकाल पाने में अकसर चूक कर जाते हैं। माना कि पूँजीवाद का उद्देश्य लाभ कमाना है और वह भी निजी नियंत्रण में, लेकिन लाभ मिलेगा कैसे? सीधा जवाब है कि जब कम लागत में ज्यादा उत्पादन होगा। अब अगला सवाल यह है कि ऐसा कब संभव होगा? जब निजी क्षेत्र अपने कर्मचारियों से ज्यादा उत्पादन ले पाएगा और यह तब तक संभव नहीं हो पाएगा, जब तक वह कर्मचारियों के साथ सही मायने में मानवीय व्यवहार नहीं करेगा।

लेकिन विडंबना यही है कि पूँजीवाद के लाभ सिद्धांतों पर चलने का दावा करनेवाली अधिकतर कंपनियाँ कर्मचारियों व उनकी प्रतिभा को कच्चा माल से ज्यादा कुछ नहीं मानतीं, लेकिन उनके नेतृत्वकर्ता इस सच्चाई को स्वीकार नहीं कर पाते कि कर्मचारी मनुष्य भी है, सिर्फ कच्चा माल नहीं और मनुष्य ऐसा कच्चा माल है, जो एक ही बार में इस्तेमाल नहीं होता, बल्कि उसे जितना भरोसा व प्यार मिलता है, वह उतना ज्यादा बेहतर कच्चा माल साबित होता है और कम लागत पर बेहतर उत्पादन व बेहतर लाभ का कारण भी बन सकता है। आप किसी भी नवाचारी कंपनी का उदाहरण ले सकते हैं, वे अपने मानव-संसाधन को ही सही मायने में सबसे बड़ी पूँजी समझते हैं और उनकी देखभाल का सबसे अधिक ध्यान रखते हैं, क्योंकि वे मनुष्य की जादुई क्षमता को भी समझते हैं और उसकी संवेदनशीलता को भी समझते हैं। वे 'मनुष्य' को नहीं, बल्कि उसकी 'कार्यक्षमता' को कच्चा माल समझते हैं, जो सुरक्षित माहौल में आश्चर्यजनक रूप से बढ़ती है। जब कार्यस्थल में मौजूद मनुष्य कर्मचारी खुद को सुरक्षित माहौल में पाता है, तो दिल व दिमाग दोनों झोंककर अपने कर्तव्य को पूरा करने की कोशिश करता है। वह जहाँ कहीं भी खुद को कमजोर पाता है, वहाँ उसे अपना साथी हाथ बँटाने के लिए तत्पर मिलता है, फिर वह अपनी चिंता भूलकर अपने कार्य-समूह या संगठन या कंपनी के लक्ष्य को हासिल करने के लिए जान भी जोखिम में डालने के लिए तत्पर हो जाता है।

कार्यस्थल में सुरक्षा-चक्र का निर्माण

आपने प्राचीन यूनान के दास कथाकार ईसप की दंतकथाएँ जरूर पढ़ी होंगी। उनमें एक लोकप्रिय कथा यह भी है — एक खेत में चार बैल चरा करते थे। वे इतने हष्ट-पुष्ट थे कि उन्हें देखकर एक शेर के मुँह में पानी आ जाता था। वह शेर खेत के आसपास घात लगाकर बैठ गया था, लेकिन जब भी वह उन बैलों पर आक्रमण करता था तो वे एक सुरक्षा-चक्र बना लेते थे। उनकी पूँछें पीछे हो जाती थीं और सींग आगे और वे एक चक्र बनाकर घूमने लग जाते थे। ऐसे में, शेर जिधर से भी आक्रमण करने की कोशिश करता था, उसे किसी-न-किसी बैल के सींगों का ही सामना करना पड़ता था, लेकिन कुछ समय बाद, वे आपस में झगड़ने लगे थे और एक-दूसरे से अलग-थलग रहने लगे थे। शेर तो घात लगाए बैठा ही था! उसने एक पर आक्रमण किया था, लेकिन इस बार उसे बचाने बाकी तीनों बैल नहीं आए। वे खेत के अलग-अलग कोने में एक-दूसरे से बेपरवाह बैठे रहे थे। इस तरह, शेर को उन्हें भी बारी-बारी से शिकार बनाने का मौका मिल गया था।

इस दंतकथा का भावार्थ यही है कि लोगों के एक समूह द्वारा उल्लेखनीय कार्य करने की क्षमता इस बात निर्भर करती है कि वे एक कार्य-समूह के रूप में किस प्रकार से एकजुट रहते हैं? लेकिन एकजुटता की यह भावना शून्य में नहीं पैदा होती है।

अपने आसपास की दुनिया पर नजर घुमाकर देखिए, तत्काल पता चल जाएगा कि हम हमेशा खतरों से घिरे हुए हैं। हमारे चारों तरफ ऐसी चीजों की भरमार है, जो हमारी जिंदगी को दयनीय बनाती हैं, लेकिन आपको यह भी एहसास होगा कि वे चीजें व्यक्तिगत रूप से आपको ही अपना निशाना नहीं बना रही हैं; वे तो सबके लिए बस वैसी ही हैं, जैसी कि उन्हें होना चाहिए। जरा ध्यान से देखिए, हमारे आसपास किसी भी समय, कहीं से भी व कितनी भी संख्या में, ऐसी शक्तियाँ, बिना किसी प्रकार के विवेक के हमारी सफलता में बाधा पहुँचाने के लिए, यहाँ तक कि हमें मारने के लिए भी, काम कर रही नजर आ जाएँगी। जब हजारों वर्ष पहले हम लोगों के पूर्वज कंदराओं में रहते थे, तब बिल्कुल यही स्थितियाँ थीं। हमारे पूर्वजों को उन सभी प्रकार की चीजों से लगातार धमकियाँ मिलती रहती थीं, जो पृथ्वी पर उनके अस्तित्व को खत्म कर सकती थीं। उन चीजों में जीवित रह पाने के संसाधनों के अभाव, जंगली आदमखोर जानवर, या फिर भयानक मौसम भी शामिल हो सकते थे, लेकिन यह सबकुछ किसी व्यक्ति-विशेष के लिए नहीं था, तब बस जिंदगी ही वैसी थी और यही सच है कि वैसी ही जिंदगी आज भी जारी है; और आगे भी ऐसे ही जारी रहेंगी। हमारे अस्तित्व के लिए खतरे निरंतर बने रहे थे, हैं और रहेंगे।

जहाँ तक आधुनिक युग के कारोबार व संगठन की बात है, तो हमें खतरों से मुकाबला करना पड़ता है, उनमें वास्तविक खतरे भी शामिल हैं और मान लिये गए खतरे भी। शेयर बाजार में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं और वे किसी भी कंपनी के कार्य-प्रदर्शन को प्रभावित कर सकते हैं। बाजार में कभी भी कोई नई प्रौद्योगिकी आ सकती है, जो पुरानी प्रचलित प्रौद्योगिकी को पछाड़ सकती है या फिर समूचे कारोबारी प्रारूप को ही रातोंरात अप्रचलित कर सकती है। भले ही हमारे प्रतिस्पर्धी जान-बूझकर हमारे खिलाफ काम नहीं कर रहे हों, फिर भी उनका बेहतर कार्य-प्रदर्शन हमारे लिए नुकसानदेह साबित हो सकता है; भले ही वे अपना ग्राहक आधार बढ़ाने की कोशिशें कर रहे हों, फिर भी वे हमारे ग्राहक-आधार में ही संधमारी कर रहे होते हैं; और भले ही वे अपनी लाभदायकता को बढ़ाने में सफल हो रहे हों, फिर वे हमारे लिए घाटे की स्थिति को पैदा करने का कारण बन रहे होते हैं। इतना ही काफी नहीं है, तो ग्राहकों की अपेक्षाओं को पूरा करने की तात्कालिकता, उत्पादन व सेवा क्षमता का तनाव और अन्य बाहरी दबाव, सभी हमारे कारोबार के खतरों में निरंतर अपना-अपना योगदान करते रहते हैं। ये सभी ताकतें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हमारे कारोबार की वृद्धि व लाभदायकता में बाधा पहुँचाने के लिए निरंतर काम कर रही होती हैं,

लेकिन उन पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं होता। वे कभी भी खत्म नहीं होनेवाली हैं; वे कभी भी बदलनेवाली नहीं हैं। क्योंकि वे जैसी थीं, वैसी अभी भी हैं और आगे भी वैसी ही बनी रहेंगी।

इन बाहरी ताकतों से भी ज्यादा खतरनाक है—आंतरिक ताकतें, जो हमारे संगठन के भीतर मौजूद रहती हैं और हम पर निरंतर दबाव भी बनाए रखती हैं। रोचक तथ्य यह है कि बाहरी ताकतों के उलट, आंतरिक ताकतें परिवर्तनशील भी होती हैं और उन पर बाकायदा हमारा नियंत्रण भी होता है। कुछ खतरे वास्तविक होते हैं और वे तात्कालिक रूप से प्रभाव डाल सकते हैं; जैसे कि खराब तिमाही या वार्षिक प्रदर्शन के बाद होनेवाली छँटनी। इसी तरह, कई लोगों के सामने आजीविका छिन जाने का भी खतरा पैदा हो सकता था, जब वे कुछ नया करने की कोशिश में कंपनी की पूँजी ही गवाँ बैठते हैं। कार्यक्षेत्र में एक-दूसरे को पीछे धकेलकर आगे बढ़ने की प्रतिद्वंद्वितापूर्ण राजनीति भी निरंतर खतरे का माहौल बनाए रखती है। इसके अलावा, कार्यस्थल में धमकी, अपमान, अलगाव, भावना-शून्यता, निरर्थकता व अस्वीकृति ऐसे दबाव हैं, जो कर्मचारियों की कार्यक्षमता को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

लेकिन ये सभी ऐसे खतरे हैं, जिन्हें 'सच्चा मानवीय नेतृत्व' आसानी से नियंत्रित कर सकता है। वह अपनी कंपनी के अंदर ऐसी सुरक्षात्मक कार्य-संस्कृति विकसित करता है, जो कर्मचारियों को आपसी प्रतिद्वंद्विता भुलाकर एक-दूसरे के साथ मिल-जुलकर रहने के लिए प्रेरित करता है; और उनके बीच आपसी सहानुभूति का माहौल बनाता है। जब नेतृत्वकर्ता अपने कर्मचारियों के लिए कार्यस्थल में सुरक्षा-चक्र का निर्माण करता है, तो वे दिल व दिमाग का उपयोग अपनी कंपनी की सुरक्षा में उपयोग कर पाते हैं। याद रहे कि किसी कंपनी की ताकत व सहनशक्ति उसके उत्पादों या सेवाओं से नहीं मिलती, बल्कि उनके कर्मचारियों की एकजुटता से मिलती है। कार्य-समूहों का हरेक सदस्य इस सुरक्षा-चक्र को बरकरार रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और ऊपर बैठा नेतृत्वकर्ता यह सुनिश्चित करता है कि वह ऐसा करे। तो सामूहिक कार्य का यही रहस्य है कि नेतृत्वकर्ता किस प्रकार अपने लोगों के लिए सुरक्षा-चक्र निर्मित करता है और किस प्रकार हरेक को उसके भीतर रखता है?

□

अध्याय-6

सामूहिक कार्य का रसायन-शास्त्र

“बैंड की एकमात्र अनोखी बात उसका रसायन-शास्त्र यानी आत्मीयता है, विशेष रूप से यदि आपमें से कोई भी असाधारण वादक या बहुत सुंदर नहीं है। आपके पास जो एक चीज है, वह है अनोखापन, इसलिए आप उस पर पकड़ बनाए रखें।”

—क्रिस मार्टिन

वर्ष 1996 के अंत में, यूनिवर्सिटी कॉलेज, लंदन (यूसीएल) के दो सहपाठियों, क्रिस मार्टिन (प्रमुख गायक-पियानोवादक) व जॉनी बकलैंड (प्रमुख गिटारवादक) ने शौकिया तौर पर रॉक बैंड बनाने की योजना बनानी शुरू की थी। जल्द ही उनके दो सहपाठी गाइ बेरीमैन (बास वादक) व विल चैंपियन (ड्रमर व संगत गायक) भी जुड़ गए थे। फिर 1997 की शुरुआत में उन्होंने ‘स्टारफिश’ नामक बैंड का गठन किया था और स्थानीय प्रवर्तकों के जरिए छोटे क्लबों में प्रदर्शन शुरू किया था। वे लोग औसत प्रतिभा के कलाकार थे, लेकिन उनके बीच जबरदस्त तालमेल था और वे धीरे-धीरे अपने प्रदर्शन की गुणवत्ता को बढ़ाते चले गए थे।

लेकिन, क्रिस मार्टिन को जल्द ही समझ में आ गया था कि बैंड को पेशेवर स्वरूप देने के लिए एक भरोसेमंद प्रबंधक की जरूरत थी। तब तक वे उतने सफल नहीं हो सके थे कि किसी पेशेवर को अपना प्रबंधक नियुक्त कर पाते। इसीलिए क्रिस ने ऑक्सफोर्ड में पढ़ाई कर रहे अपने बचपन के दोस्त फिल हार्वे से मदद माँगी थी और बैंड का नाम बदलकर ‘कोल्डप्ले’ कर दिया था। हार्वे व क्रिस अपने पिता की आर्थिक मदद से अपने बैंड का पहला संगीत-संग्रह ‘सेफ्टी’ का अभिलेखन (रिकॉर्डिंग) करा पाने में सफल रहा था। तीन गीतों के संग्रह ‘सेफ्टी’ की कुल 500 प्रतियों से 450 तो संगीत अभिलेखन कंपनियों व दोस्तों में बाँटी गई थीं, लेकिन फिल हार्वे आम श्रोताओं को 50 प्रतियाँ बेच पाने में सफल रहा था।

अब ‘कोल्डप्ले’ को अपना प्रबंधक मिल गया था और उनकी संगीत मंडली पूरी हो गई थी। मित्र-मंडली के आपसी रसायन-शास्त्र ने अपना कमाल दिखाना शुरू किया था। जुलाई 2000 में पार्लोफोन रिकॉर्ड्स ने ‘कोल्डप्ले’ का पहला पेशेवर संगीत-संग्रह ‘पैराशूट’ जारी किया था और उनकी लोकप्रियता बढ़ती चली गई थी। अगले डेढ़ दशकों में ‘कोल्डप्ले’ ने सात संगीत-संग्रह जारी किए थे। उनकी रचनाओं को विभिन्न पुरस्कारों के लिए 209 नामांकन प्राप्त हुए थे; और वे 9 ब्रिट अवार्ड्स, 5 एम टी.वी. वीडियो म्यूजिक अवार्ड्स व 7 ग्रैमी अवार्ड्स सहित 62 पुरस्कार जीतने में सफल रहे। जनवरी 2016 तक ‘कोल्डप्ले’ के 8 करोड़ से अधिक संग्रह बिक चुके थे और वह विश्व के सबसे ज्यादा बिकनेवाले संगीत कलाकारों की सूची में शामिल हो चुका था। जी हाँ, जैसा कि क्रिस मार्टिन ने कहा है, ‘उसकी मंडली में कोई भी असामान्य कलाकार नहीं था, लेकिन उनके बीच ऐसा रासायनिक समीकरण बन गया था, यानी ऐसी आत्मीयता कायम हो गए थे कि कोई भी चीज उनके लिए मुश्किल नहीं रह गई थी और वे लगातार सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते चले गए थे।’

मुश्किलों के लिए ही बने हैं हम

हम अपने पेशेवर जीवन की प्रतिस्पर्धा से बस यूँ ही घबरा जाते हैं, लेकिन यदि हम मानवजाति के क्रमागत विकास की परिस्थितियों पर नजर दौड़ाएँ, तो पता चल जाएगा कि असल में प्रकृति ने मुश्किलों से मुकाबले के लिए ही हमारे शरीर की रचना की है।

हमारी कल्पना से भी ज्यादा भयानक परिस्थितियाँ थीं हमारे पूर्वजों के सामने। उनके पास जाड़े से बचने के लिए न तो कोई तापन प्रणाली (हीटिंग सिस्टम) थी और न ही गरमियों से बचने के लिए वातानुकूलन प्रणाली (एयरकंडीशनिंग सिस्टम)। तब किसी प्रकार का कोई सुपर बाजार भी नहीं था कि जरूरत की हर चीज एक ही जगह मिल जाए। हरेक निवासी को किसी भी प्रकार के खाद्य के लिए भटकना या फिर शिकार करना पड़ता था। अपने अस्तित्व को बचाए रखना ही मनुष्य की सबसे बड़ी व एकमात्र चुनौती थी। हर दिन, हर पल आसपास ऐसा कुछ जरूर होता था, जो उन्हें नुकसान पहुँचा सकता था। पढ़ने-लिखने या नौकरी हासिल करने की चिंता अभी उनके जीवन का हिस्सा नहीं बनी थी। न तो कोई विद्यालय था और न ही कोई अस्पताल। न तो कोई नौकरी थी और न ही कोई कंपनी। यहाँ तक कि कोई देश भी नहीं था तब।

जी हाँ, हम आज से करीब 50,000 साल पहले की बात कर रहे हैं, जब आधुनिक मानवजाति ने इस दुनिया में अपना पहला कदम रखा था। हमारे पूर्वज बिल्कुल भूखे-नंगे थे। उन्होंने अपने लिए जिस प्रकार के भी अवसर पैदा किए थे, वे सब उनकी इच्छाशक्ति व कठिन परिश्रम से ही पैदा हुए थे। चूँकि उन्हें वह सब करना था, इसीलिए उन्होंने किया भी था। प्रकृति ने मानवजाति की रचना ही इस प्रकार से की थी कि वे भयानक खतरों व अपर्याप्त संसाधनों की परिस्थितियों से निपटने में सक्षम थे। पाषण-काल में भी मानवजाति वैसी ही थी, जैसी आज है। हमारे पूर्वज देखने में भी वैसे ही थे, जैसे कि हम आज देखते हैं और वे भी उतने ही होशियार व सक्षम थे, जितने कि आज हम हैं। हाँ, उनके पास सिर्फ एक ही चीज नहीं थी और वह थी, हमारे आधुनिक युग की सुख-सुविधाएँ। इसके अलावा वे हमारे-आपके जैसे ही थे।

मानवजाति का ज्ञात इतिहास साबित करता है कि मनुष्य का लगभग सबकुछ इस तरह से बनाया गया है कि वह कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी खुद को जीवित रखने के साथ-साथ अपनी प्रजाति को भी आगे बढ़ा पाने में सफल हो सके। हमारा शरीर क्रिया विज्ञान (फिजियोलॉजी) व एक साथ मिलकर काम करने की जरूरत, दोनों हमारे अस्तित्व के साथ ही हमारे मस्तिष्क में मौजूद हैं। यही कारण है कि जब हम एक साथ मिलकर किसी खतरे का सामना करते हैं तो हमारे कार्य-प्रदर्शन की क्षमता अपने उच्चतम स्तर पर चली जाती है, लेकिन दुर्भाग्य यह है कि आज की निगमित कंपनियों के अधिकतर नेतृत्वकर्ता अपने कार्य-समूहों को बाहरी चुनौतियों से मुकाबला के लिए उत्साहित बनाए रखने के लिए आंतरिक रूप से कार्यस्थल में भी हमेशा आपात-स्थिति बनाए रखते हैं; और वे 'स्वस्थ प्रतिस्पर्धा' के नाम पर आपसी 'प्रतिद्वंद्विता' को हवा देते हैं, लेकिन जीव विज्ञान (बायोलॉजी) व मानव विज्ञान (एंथ्रोपोलॉजी) बताता है कि प्रतिद्वंद्विता हमारी स्वाभाविक सामूहिक कार्य-भावना को नुकसान पहुँचाती है और कार्यस्थल में अविश्वास व असुरक्षा का माहौल बनाती है और जब मनुष्य अपने ही लोगों से खुद को असुरक्षित महसूस करने लगता है, तो बाहरी चुनौतियों से मुकाबला करने की बजाय उसकी शक्ति अपनों के बीच खुद को बचाए रखने की कोशिशों में ही खत्म हो जाती है।

जरा अपने पूर्वजों के बारे में गौर कीजिए कि उन्होंने भयानक विपरीत परिस्थितियों में कैसे खुद को व अपनी संतानों को बचाए रखा था, जबकि वे अन्य विलुप्त हो चुके प्राणियों के मुकाबले आकार-प्रकार व शारीरिक शक्तियों में काफी कम थे? उनके पास ऐसी क्या चीज थी, जो अन्य प्राणियों में नहीं थी? मनुष्य जाति के पास जो सबसे अनोखी चीज रही है, वह है 'नियोकॉर्टेक्स'। यह मस्तिष्क की बाहरी परत (सेरेब्रल कॉर्टेक्स) का बहुत ही

जटिल हिस्सा है, जो मनुष्य को अपनी समस्याओं को सुलझाने व विवेकशील संचार की क्षमताएँ प्रदान करता है। वैसे तो अन्य जानवरों में भी संचार की क्षमता है, लेकिन प्रकृति ने वाक्य-रचना व व्याकरण की क्षमता सिर्फ मनुष्य को ही प्रदान किया है, लेकिन मनुष्य जाति के जीवित बने रहने व अपनी संतति को लगातार विकसित बनाते जाने का सबसे महत्वपूर्ण कारण है, एक-दूसरे के साथ उसकी सहयोग करने की असाधारण क्षमता। मानव ही सबसे अधिक सामाजिक प्रजाति है, जिसकी जीवित बने रहने की क्षमता व समृद्ध बनाने की योग्यता दूसरों की मदद पर निर्भर करती है।

प्रकृति ने हमें एक साथ मिलकर काम करने, एक-दूसरे को मदद करने व सुरक्षित रखने की अद्भुत योग्यता प्रदान की है। हमारी यह योग्यता बहुत ही अच्छी तरह से काम करती आ रही है। यही कारण है कि हम अपने अस्तित्व की रक्षा भी करते रहे और अपनी संतति को लगातार बढ़ा व समृद्ध बनाने में भी सफल होते चले गए। ध्यान दीजिए, हाथी भी अपना अस्तित्व बचा पाने में सफल रहा, लेकिन वह आज भी लगभग वैसा ही है, जैसा कि लाखों वर्ष पहले था, लेकिन हमारी जिंदगी 50,000 वर्ष पहले के मुकाबले पूरी तरह से बदल गई है। गौर कीजिए, प्रकृति ने मानव प्रजाति को इस तरह बनाया था कि वह खुद को अपने वातावरण के अनुरूप ढाल सके, लेकिन हमारी मानवजाति एक साथ मिलकर काम करने व समस्याओं को सुलझा पाने में इतने अच्छे रहे थे कि धीरे-धीरे अपने वातावरण को ही अपने अनुरूप ढलते चले गए। अर्थात् हम आपसी सहयोग व बुद्धिमत्ता के बल पर अपनी परिस्थिति को ही अपने अनुरूप बना पाने में सफल होते रहे।

लेकिन हमारी सबसे बड़ी समस्या या विशेषता ही यह है कि हम अपनी आधारभूत आनुवंशिक संकेत-लिपि (बेसिक जेनेटिक कोड) को नहीं बदल सके। हम अभी भी वही हैं, जो 50,000 साल पहले थे; हमारा कार्य-व्यवहार कभी भी नहीं बदला; हमारे आपसी सहयोग की भावना कभी भी नहीं बदली; और एक-दूसरे पर हमारी निर्भरता की स्थिति भी नहीं बदली। अर्थात् हमने अपने सामूहिक कार्यों से अपनी परिस्थितियों को अपने काबू में कर लिया; हमने अपने आसपास की दुनिया को संसाधन-संपन्न बना लिया, लेकिन स्वयं को नहीं बदल पाए। हम आज भी 'भावुक' व 'सामाजिक' मनुष्य ही हैं, जो एक-दूसरे के साथ सहयोग किए बिना, एक-दूसरे की रक्षा की कोशिश किए बिना एक पल भी नहीं रह सकता। याद रहे कि हमारी जो शक्तियाँ हमें खुद को लाभदायक स्थितियों में रखने में सफल बनाती हैं, वही हमारे लिए समस्याएँ भी पैदा करती हैं। कोई भी उपलब्धि शून्य में पैदा नहीं होती, हमें उसकी कीमत भी चुकानी पड़ती है।

मानव-समूह की रासायनिक निर्भरता

मानवजाति हमेशा से समूहों में ही निवास करती रही थी और रोचक तथ्य यह भी है कि उन समूहों में रहनेवालों की अधिकतम संख्या 150 के आसपास ही होती थी। ऐसा इसलिए था कि समूह के हर व्यक्ति दूसरे को जानते-समझते थे और एक-दूसरे पर भरोसा रखते थे और वे ऐसा इसलिए भी करते थे, क्योंकि समूह में रहना उनके व्यक्तिगत हितों के लिए भी जरूरी था। पुरुषों का दल एक साथ मिलकर शिकार पर निकल जाया करता था, तो बाकी समुदाय एक साथ मिलकर बाल-बच्चों का पालन-पोषण और बीमार व बूढ़े लोगों की देखभाल किया करता था।

जैसा कि किसी भी कार्य-समूह में होता है, तब भी उन मानव-समूहों के सदस्यों में टकराव की स्थितियाँ आती थीं, लेकिन जब बाहरी खतरों से लड़ने की नौबत आती थी, तो वे अपने सारे मतभेदों को किनारे कर देते थे और उन खतरों से एक साथ मिलकर निपटते थे। यह बिल्कुल वैसा ही था, जैसे कि आपस में अक्सर लड़ते-झगड़ते रहनेवाले सहोदर, किसी अपने पर आनेवाले खतरे से निपटने के लिए आपसी मन-मुटाव को भूलकर एकजुट हो

जाते हैं। यह हमारा मानवीय स्वभाव ही है कि हम अपनों को सुरक्षित रखने के लिए हमेशा ही तत्पर हो जाते हैं। ऐसा न करना हमारे मनुष्य होने की स्वाभाविकता के खिलाफ जाता है। साथ ही, अस्तित्व बनाए रखने व विकसित होने की सामूहिक योग्यता को भी नुकसान पहुँचाता है।

यही कारण है कि आज भी राजद्रोह को हत्या जैसा दंडनीय अपराध माना जाता है। चूँकि हम अपने अस्तित्व की रक्षा की योग्यता को सबसे महत्वपूर्ण मानते आए हैं, इसीलिए हम आपसी भरोसे की भावना को भी गंभीरता से लेते हैं। मानवजाति की आश्चर्यकारी सफलताएँ इस तथ्य को उजागर करती हैं कि प्रतिस्पर्धा व व्यक्तिवाद की तुलना में आपसी सहयोग व सहायता ज्यादा कारगर होती हैं। हमारे पूर्वज बहुत अच्छी तरह से जानते-समझते थे कि जब उन्हें पहले से ही प्रकृति की कठिनाइयों, सीमित संसाधनों व अन्य बाहरी खतरों से लगातार संघर्ष करना पड़ रहा था, तो वे आपस में लड़-झगड़कर अपनी मुसीबत को क्यों बढ़ाएँ? इसीलिए, सामूहिकता व सामुदायिकता की भावना को कायम रखना उनकी बुनियादी जरूरत बन गई थी और यह सब उनके स्वभाव का ही हिस्सा बनता चला गया था।

यही कारण था कि चाहे वे अमेजन के वर्षा वन हों या फिर अफ्रीका के खुले मैदानी इलाके सभी जगह सहकारी ग्रामीण जीवन ही मौजूद रहे थे। तो बहुत साफ है कि हमारे पूर्वजों के अस्तित्व व सफलता के अवसरों को भौतिक वातावरणों ने नहीं, बल्कि हमारी प्रजातियों के जीव-विज्ञान व मानव होने की उनकी स्वयं की संरचना ने निर्धारित किया था। इस तरह मानव सभ्यता के विकास की नींव है, आपसी सहयोग की भावना। चूँकि विश्व के अलग-अलग हिस्सों में विकसित हुए मानव-समुदायों को अलग-अलग विशिष्ट परिस्थितियों से मुकाबला करना पड़ा था, इसीलिए उनकी जीवन शैलियाँ व सभ्यताएँ भी अलग-अलग विशेषताओं के साथ विकसित हुई थीं, लेकिन एक-दूसरे का सहयोग करना और एक-दूसरे से सहायता लेना, पृथ्वी ग्रह पर मौजूद हर मानव का जन्मजात स्वभाव रहा था और हम आधुनिक मानवों ने भी अपने पूर्वजों से ही उत्तराधिकार के रूप 'सहयोग करने व सहायता लेने' का अपना जन्मजात स्वभाव हासिल किया है।

तो हम लोग सामाजिक प्राणी हैं और सामाजिक होना जितना हजारों वर्ष पहले महत्वपूर्ण था, उतना आज भी है। यह हमारे विश्वास का निर्माण करने व उसे बनाए रखने और एक-दूसरे के बारे में जानने-समझने का महत्वपूर्ण तरीका था। जब हम काम नहीं कर रहे होते हैं, तब हम एक-दूसरे को जानने के लिए समय बिताते हैं, वही हमारे बीच विश्वास का बंधन कायम करता है। यह बिल्कुल वही कारण है कि हम एक साथ मिलकर खाना खाने व परिवार के रूप में काम करने को सचमुच महत्वपूर्ण क्यों मानते हैं? सम्मेलन, वनभोज व अन्य प्रकार के सामूहिक आयोजन को भी इसीलिए बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है कि इससे कर्मचारियों को आपस में खुलकर बातचीत करने व एक-दूसरे को जानने-समझने का मौका मिलता है। हम जितना एक-दूसरे से परिचित होते जाते हैं, हमारे बीच उतना ही मजबूत रिश्ता कायम होता जाता है। संगठनों के नेतृत्वकर्ताओं के लिए भी सामाजिक विचार-विमर्श उतना ही महत्वपूर्ण होता है। कार्यालय में बैठकों के अलावा कर्मचारियों के बीच घूमना-फिरना और उन्हें बातचीत में शामिल करना भी आपसी समझदारी व विश्वास के बंधन को मजबूत बनाता है।

यदि आपको विद्यालय या महाविद्यालय के छात्रावास में अन्य विद्यार्थियों के साथ रहने का मौका मिला है तो आपके लिए यह समझना आसान होगा कि एक-दूसरे के साथ बिना मतलब के भी समय बिताना कितना महत्वपूर्ण होता है! यही कारण है कि हम बचपन के साथियों व विद्यालय-महाविद्यालय के दोस्तों को आजीवन नहीं भूल पाते, भले ही उनसे कितने भी समय के लिए और कितने ही दूर क्यों न हो जाएँ! इस तरह, यह साबित होता है कि मानव प्रजाति के रूप में हमारी सफलता हमारे भाग्य का नतीजा नहीं थी, बल्कि यह हमारे द्वारा कमाई गई थी। मानव के

रूप में हम आज जहाँ पहुँचे हैं, उसके लिए हमारे पूर्वजों ने बहुत ही कठिन परिश्रम किया था और वह सबकुछ एक-दूसरे के साथ मिल-जुलकर किया था। जी हाँ, हम लोग एक साथ मिलकर काम करने के लिए निर्मित हुए हैं। हम लोग एक-दूसरे से बहुत ही गहरे व जीव-वैज्ञानिक स्तर पर जुड़े हुए सामाजिक-यंत्र (सोशल मशीन) हैं। यही कारण है कि जब हम एक-दूसरे की मदद करते हैं और हमारा शरीर हमारी कोशिशों के लिए हमें पुरस्कृत करता है कि हम इसे लगातार जारी रख सकें।

क्या आपने कभी गौर किया है कि हमारा शरीर हमारी कोशिशों के लिए हमें कैसे पुरस्कृत करता है? याद रहे कि हमारा हर प्रकार का मनोवैज्ञानिक विकास परीक्षण व त्रुटि (ट्रायल एंड एरर) की लंबी प्रक्रिया से गुजरकर संभव हुआ है। प्रकृति ने बेहद संवेदनशील स्वाद कलिकाओं (टेस्ट बड्स) के साथ हमारी जीभ की रचना की है, लेकिन स्वाद कलिकाओं की रचना सिर्फ इस काम के लिए नहीं की गई है कि हम विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजनों व पेय पदार्थों का आनंद ले सकें। इन स्वाद कलिकाओं का मुख्य काम पाचन-तंत्र (डाइजेस्टिव सिस्टम) को यह संकेत भेजना है कि वह हमारे द्वारा निगले जा रहे पदार्थों को सबसे अच्छे तरीके से पचाने के लिए किस प्रकार के 'एंजाइम' (विभिन्न प्रकार की जैव-रासायनिक प्रतिक्रियाओं को घटाने-बढ़ाने के लिए जरूरी विशिष्ट उत्प्रेरक पदार्थ) का प्रवाह करे! जी हाँ, यह बिल्कुल वैसे ही काम करता है, जैसे कि हमारी नाक मस्तिष्क को सूचित करती है कि कहीं खाद्य पदार्थ दूषित तो नहीं है? इसी प्रकार, प्रकृति ने हमारी भौंहों की रचना इसलिए नहीं की है कि हम सुंदर दिखें। भौंह इस जरूरी काम के लिए बना हुआ है कि वह शिकार के पीछे दौड़ते या शिकार हो जाने से बचने के लिए भागते समय हमारे चेहरे से निकलनेवाले पसीने के प्रवाह को आँखों में न जाने दे। इस तरह, प्रकृति ने हमारे शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग की रचना एक विशिष्ट कार्य के लिए की है, जो हमें अपने अस्तित्व को बचाए रखने में मदद करता है।

ये सारी चीजें बिल्कुल वैसे ही काम करती हैं, जैसे कोई माता-पिता, शिक्षक या प्रबंधक बखूबी जानता है कि वह अपनी संतान, विद्यार्थी या कर्मचारी को अपेक्षित व्यवहार या परिणाम के लिए किस प्रकार का प्रलोभन या धमकी दे! वे जानते हैं कि हम पुरस्कार हासिल करने के लिए अपने काम पर ध्यान केंद्रित करेंगे। बच्चों या छात्रों को पता नहीं चलता है कि उनके माता-पिता या शिक्षक पुरस्कार व दंड प्रक्रिया (रिवॉर्ड एंड पनिशमेंट प्रोसेस) से किस प्रकार उनके व्यवहार को अनुकूलित कर रहे हैं, लेकिन वयस्क कर्मचारी के रूप में हम पूरी तरह सचेत होते हैं कि जब हमारी कंपनी हमें प्रोत्साहन राशि की पेशकश करती है, तो उसका उद्देश्य क्या होता है? हम अच्छी तरह से जानते हैं कि हमें अतिरिक्त लाभ तभी मिल सकेगा, जब हम अपेक्षित नतीजे हासिल कर सकेंगे और सच्चाई यही है कि 'पुरस्कार व दंड प्रक्रिया' लगभग हमेशा ही सफलतापूर्वक काम करती है।

रोचक तथ्य यह है कि प्रकृति ने भी हमसे अपेक्षित नतीजे हासिल करने के लिए 'पुरस्कार व दंड प्रक्रिया' से हमें अनुकूलित किया है। अब अपने शरीर-विज्ञान पर ही ध्यान दीजिए, तो पता चलता है कि हमारे काम करने की कुशलता को बढ़ाने व एक-दूसरे के साथ सहयोग करने के लिए हमारे शरीर ने खुशी, अभिमान, आनंद या चिंता जैसी सकारात्मक व नकारात्मक भावनाओं की प्रणाली बनाई हुई है। जब हम स्वयं अपने व अपने आसपास के लोगों को जीवित रखने व देखभाल करने के लिए काम करते हैं, तो हमारा शरीर हमें विशेष प्रकार के रसायनों से पुरस्कृत करता है, यानी हमारा शरीर अपने भीतर ऐसे रसायन छोड़ता है, जो हमारी अच्छी भावना या खुशी के एहसास लिये उत्प्रेरक का काम करता है। जी हाँ, हजारों वर्ष पहले के मानव की तरह हम आज भी पूरी तरह से उन्हीं जीव-वैज्ञानिक रसायनों पर निर्भर हैं।

हमारे शरीर में मुख्य रूप से एंडोर्फिन, डोपामाइन, सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन नामक चार प्रकार के प्राथमिक

उत्प्रेरक रसायन (प्राइमरी कैटालिस्ट केमिकल) यानी एंजाइम मौजूद हैं, जो हमारी सकारात्मक भावनाओं में योगदान करते हैं। ये रसायन अकेले भी काम करते हैं और संयुक्त रूप से भी। इसकी खुराक मात्रा कम भी हो सकती है और ज्यादा भी और हम खुशी, अभिमान या आनंद की भावनाओं का जिस भी मात्रा में अनुभव करते हैं, उन सभी के आधारभूत कारण ये रसायन व उनकी कम-ज्यादा खुराक ही हैं। प्रत्येक स्थिति में हमारा शरीर इन रसायनों की निश्चित खुराक को हमारी नसों में भेजता है और जब ये रसायन खून में मिलकर हमारे शरीर में दौड़ता है, तो हम एक विशेष भावना को महसूस करते हैं। याद रखें कि प्रकृति ने हमारे शरीर में इन रसायनों की उपस्थिति व उनके स्राव की प्रणाली सिर्फ इसलिए नहीं सुनिश्चित व विकसित की है कि हम सकारात्मक भावनाओं को अनुभव करें, बल्कि इन रसायनों का वास्तविक व व्यावहारिक उद्देश्य है—हमारी उत्तरजीविता, यानी अपने अस्तित्व को बनाए रखने की हमारी क्षमता की सुरक्षा।

वैसे, मानव होना भी अपने आपमें एक प्रकार का विरोधाभास ही है। मानवजाति हमेशा से व्यक्ति-विशेष के रूप में व समूहों के सदस्यों के रूप में मौजूद रही है। अर्थात् व्यक्ति-विशेष अपनेआप में अकेला भी है और कड़्यों के समूह का हिस्सा भी। यह मानवजाति में जन्मजात रूप से अंतर्निहित हितों के टकराव (कनफ्लिक्ट ऑफ इंटेरेस्ट) का कारण भी है। जब भी हम कोई फैसला करते हैं या कोई काम करते हैं तो स्वाभाविक रूप से अपने व्यक्तिगत हितों को सबसे ज्यादा ध्यान में रखते हैं और हमारे ये व्यक्तिगत हित अकसर हमारे समुदाय या सामूहिक हितों के खिलाफ चले जाते हैं। ऐसे में, मानव समुदाय के रूप में या किसी कार्य-समूह के सदस्य के रूप में हमें यह विशेष ध्यान रखने की जरूरत पड़ती है कि कहीं हमारा व्यक्तिगत हित हमारे सामुदायिक या सामूहिक हितों के खिलाफ न हो जाए! ऐसे में, जब हम विशेष रूप से खुद को ही आगे बढ़ाने के लिए काम करते हैं, तो वह हमारे समूह को चोट भी पहुँचा सकता है। इसके उलट, यदि हम विशेष रूप से अपने समूह को आगे बढ़ाने के लिए काम करते हैं, तो हमें अपने व्यक्तिगत हितों की कीमत भी चुकानी पड़ सकती है।

मानवजाति में हितों के टकराव का असल कारण उसके जीव-विज्ञान (बायोलॉजी) में ही मौजूद है। हमारे शरीर में मौजूद चार प्राथमिक उत्प्रेरक रसायनों में से दो हमें भोजन खोजने व काम को पूरा करने में मदद करते हैं, तो बाकी दो रसायन हमें सामाजिक रूप से सक्रिय होने व सहयोग के लिए प्रेरित करते हैं। एंडोर्फिन व डोपामाइन ऐसे दो एंजाइम हैं, जो हमें व्यक्ति-विशेष के रूप में अपनी व्यक्तिगत जरूरतों यानी भोजन खोजना व उसे सुरक्षित रखना, आश्रय बनाने, औजारों का आविष्कार करने और आगे बढ़कर काम को पूरा करने के लिए प्रेरित करते हैं। इन रसायनों को हम 'स्वार्थी रसायन' (सेल्फिस केमिकल) भी कह सकते हैं। बाकी दो एंजाइम सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन ऐसे हैं, जो हमें एक साथ मिलकर समूह में काम करने और विश्वास व निष्ठा की भावना को विकसित करने में मदद करते हैं। इन रसायनों को हम 'निस्स्वार्थी रसायन' (सेल्फलेस केमिकल) भी कह सकते हैं। ये रसायन हमारे सामाजिक बंधन को मजबूत बनाते हैं, ताकि हम एक साथ मिलकर व सहयोग के साथ काम करें और यही वह भावना है, जो समूह के रूप में हमें अपने अस्तित्व को बनाए रखने व अपनी संतति को आगे बढ़ाने में मदद करती है।

***तब तो भूखे ही मर चुके होते हम!

यदि हमारे शरीर में दो स्वार्थी रसायन—एंडोर्फिन व डोपामाइन—नहीं होते, तो हमारे पूर्वज हजारों वर्ष पहले ही भूखे मर चुके होते और आज हम उनका यशोगान कर पाने के लिए बचे नहीं होते; हमारी सभ्यता इस मुकाम पर नहीं पहुँची होती।

एंडोर्फिन का एक ही काम है—शारीरिक दर्द को ढकना। प्रकृति ने इस रसायन के रूप में हमें व्यक्तिगत नशा

प्रदान किया है। जब हम तनाव या डर महसूस करते हैं, तब मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र के भीतर मौजूद एंडोर्फिन हार्मोन समूह का स्राव शुरू हो जाता है। यह हमें बिल्कुल अफीम जैसा नशा कर हमारे दर्द को ढक देता है। कठिन शारीरिक अभ्यासों के दौरान या उसके बाद अधिकतर खिलाड़ियों में जो उत्साह देखने को मिलता है, उसका असल कारण एंडोर्फिन ही है, जो उनकी नसों में तेजी से दौड़ रहा होता है। यही वह रसायन है, जिसके चलते धावक या अन्य खिलाड़ी अपनी शारीरिक सहनशक्ति को उच्च स्तरों पर ले जाते हैं और फिर आश्चर्यजनक प्रदर्शन कर हमें चौंका पाने में सफल हो पाते हैं। ध्यान रहे कि खिलाड़ी ऐसा इसलिए नहीं करते हैं कि उन्हें कड़े अनुशासन में रहते हुए ऐसा करना पड़ता है, बल्कि वे इसलिए करते हैं कि उन्हें ऐसा करने में आनंद महसूस होता है। वे अपनी उच्चतम सहनशक्ति से प्यार करते हैं और उसे हासिल करने के लिए तरसते हैं। ध्यान रहे कि एंडोर्फिन के स्राव के जीव-वैज्ञानिक कारण का शारीरिक अभ्यास से कोई लेना-देना नहीं होता, बल्कि उसका लेना-देना सिर्फ व्यक्ति-विशेष (खिलाड़ी) के अस्तित्व से जुड़ा हुआ है।

यदि हम अपने पूर्वजों की जीवन की जरूरतों पर नजर दौड़ाएँ तो इसका व्यावहारिक कारण साफ होता है कि प्रकृति ने मनुष्य को इस नशीले रसायन एंडोर्फिन की सौगात क्यों दी थी! क्योंकि, एंडोर्फिन की बदौलत मानव शारीरिक सहनशक्ति की वैसी उल्लेखनीय क्षमता हासिल कर सकता था, जो उसके अस्तित्व की रक्षा के लिए बहुत जरूरी था। जरा सोचिए, यदि यह रसायन न होता तो पाषण-युग में हमारे पूर्वजों में उतनी शारीरिक सहनशक्ति कैसे आती, वे शिकार के पीछे मीलों तक कैसे दौड़ने के बाद भी शिकार को अपनी पीठ पर लादकर अपने निवास स्थानों तक कैसे वापस लौट पाते? यदि हमारे शिकारी पूर्वज थक जाते होते, तो उनके समुदाय के बाकी लोगों को नियमित रूप से भोजन कैसे मिल पाता और वे कब तक जिंदा रह पाते? तो प्रकृति ने हमारे पूर्वजों को 'एंडोर्फिन' के रूप में विशेष प्रकार का प्रोत्साहन पुरस्कार दिया था, ताकि वे अपने अस्तित्व की रक्षा व अपनी संतति के विकास के लिए भोजन जुटाने के अपने काम में लगातर उत्साहित बने रहें।

लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि हमारे पूर्वज सिर्फ इसीलिए शिकार पर नहीं जाते थे कि अपने व अपने समुदाय के लिए नियमित तौर पर भोजन जुटाना उनकी मजबूरी थी, बल्कि कठिन परिश्रम करना उन्हें अच्छा लगता था। ठीक उसी तरह, जैसे दिन भर तनावपूर्ण काम के बाद हम व्यायामशाला में कसरत कर अपने शरीर को सुस्ताने का मौका देते हैं। यदि आपको कसरत के आनंद की आदत पड़ जाती है, तो आप उसके लिए तरसने लग जाते हैं। क्योंकि, तब तक प्राकृतिक नशा 'एंडोर्फिन' आपको अपनी गिरफ्त में ले चुका होता है। चूँकि आज के युग में भोजन खोजने के लिए ज्यादा मेहनत की जरूरत नहीं पड़ती, इसीलिए हमारा शरीर इस काम के लिए हमें 'एंडोर्फिन' का पुरस्कार नहीं देता। फिर भी, हम कसरत जैसी शारीरिक मेहनत से 'एंडोर्फिन' का पुरस्कार हासिल कर सकते हैं।

क्या आपने कभी सोचा है कि हम ठहाका क्यों लगाते हैं और इस काम में हमें क्यों आनंद मिलता है? इसका उत्तर आपको जगजीत सिंह की लोकप्रिय गजल की इन पंक्तियों में मिल सकता है—“तुम इतना जो मुसकरा रहे हो; क्या गम है जिसको छुपा रहे हो।” जी हाँ, हम इसीलिए जोर-जोर से हँसते हैं कि हम अपने शारीरिक दर्द या मानसिक तनाव को छुपाने की कोशिश करते हैं। चूँकि हँसते समय हमारा शरीर 'एंडोर्फिन' छोड़ता है और उसके नशे में हम अपने मस्तिष्क व शरीर के अन्य अंगों की ऐंठन को महसूस नहीं करते हैं।

'डोपामाइन' दूसरा महत्वपूर्ण रसायन है, जिसे प्रकृति ने हमें हमारे विकास के लिए महत्वपूर्ण कार्य करने के पुरस्कार के रूप में प्रदान किया है। जब हम किसी जरूरी काम, महत्वपूर्ण परियोजना या बड़े लक्ष्य को पूरा करते हैं, तब मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र के भीतर मौजूद 'डोपामाइन' हार्मोन समूह का स्राव शुरू हो जाता है, जो हमें

‘संतोष’ का अनुभव प्रदान करता है। हम बखूबी जानते हैं कि जब हम जरूरी कार्यों को पूरा करते हैं तो हमें विकास या उपलब्धि का एहसास होता है और यह सबकुछ ‘डोपामाइन’ के कारण होता है, लेकिन क्या आपने सोचा है कि प्रकृति ने मानव को इस रसायन का उपहार क्यों दिया है?

गौर कीजिए, जब कृषि का विकास नहीं हुआ था, तब मानवजाति को अपने अगले भोजन के लिए कितनी चिंता करनी पड़ती होगी? यदि मानव समूह ने शिकार करने व भोजन जुटाने के काम में लगातार अपना ध्यान केंद्रित नहीं रखा होता तो उसका भविष्य क्या होता? उसका अस्तित्व कब का नष्ट हो चुका होता; मानव सभ्यता का विकास न हुआ होता और तब हमारा भी कोई निशान न होता। प्रकृति ने इस काम के लिए बहुत ही चतुर व्यवस्था की थी। क्या आपने कभी सोचा है कि हमें भोजन करना क्यों अच्छा लगता है? क्योंकि हम भोजन से ही ‘डोपामाइन’ प्राप्त करते हैं और चूँकि हमें भोजन करना अच्छा लगता है, इसीलिए हम भोजन जुटाने के कार्य को बार-बार, लगातार दोहराते हैं। यह ‘डोपामाइन’ ही है, जिसने मानव को विकास के पूर्वग्रह के साथ ‘लक्ष्य-उन्मुखी’ (गोल ओरिएंटेड) प्रजाति बनाया है।

यही कारण है, जब हमें कोई अनजान लक्ष्य दिया जाता है तो हमारे मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र में ‘डोपामाइन’ की छोटी खुराक का स्राव होता है और हम अपनी दूरदृष्टि से उस लक्ष्य की कल्पना करने लगते हैं। जब पहली खुराक का असर खत्म होने लगता है तो फिर ‘डोपामाइन’ की दूसरी छोटी खुराक का स्राव होता है और हम उस लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ने लगते हैं और यह सिलसिला तब तक चलता रहता है, जब तक कि हम उस लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर लेते। कल्पना कीजिए, पाषाण-युग में जब हमारे पूर्वजों में से किसी ने पहली बार फल से लदा पेड़ देखा होगा, तो क्या हुआ होगा? ‘डोपामाइन’ की पहली खुराक का स्राव हुआ होगा, जिसने उसे पेड़ की दिशा में बढ़ने के लिए प्रेरित किया होगा। जब वह कुछ और आगे बढ़ा होगा, तो उसे फल पहले के मुकाबले ज्यादा बड़ा दिखाई दिया होगा। ‘डोपामाइन’ की दूसरी खुराक ने उसे अपनी तरक्की का एहसास कराया होगा और वह आगे बढ़ा होगा। यह सिलसिला तब तक चला होगा, जब तक कि उसने फल को चख नहीं लिया होगा। साफ है कि ‘डोपामाइन’ की बदैलत ही मनुष्य ने कोशिशों का सिलसिला जारी रखा था और उसे नई-नई उपलब्धियाँ हासिल होती चली गई थीं...और हम आज के आधुनिक युग तक पहुँचने के बाद भी ऐसी कोशिशों का सिलसिला कायम रखे हुए हैं।

मानव के विकास का यह सिलसिला दौड़ प्रतियोगिताओं की तरह ही है। हरेक मील-पत्थर को पार करने के बाद धावक को उसका शरीर ‘डोपामाइन’ की खुराक प्रदान करता है और वह दौड़ना जारी रखता है; अगला मील-पत्थर पार करने के बाद उसे ‘डोपामाइन’ की दूसरी बड़ी खुराक मिलती है; और वह ‘डोपामाइन’ की उससे भी बड़ी खुराक के लिए तब तक दौड़ता चला जाता है, जब तक कि अंतिम उपलब्धि के रूप में उसे ‘डोपामाइन’ का पूरा घड़ा ही नहीं मिल जाता। साफ है, हमारा लक्ष्य जितना बड़ा होता जाता है, हमें उतनी ही ज्यादा कोशिश करनी पड़ती है और उसके लिए हमारा शरीर जरूरी बड़ी मात्रा में ही ‘डोपामाइन’ छोड़ता रहता है, ताकि हम बड़ी उपलब्धियों का सिलसिला जारी रख सकें। इस तरह, यदि लक्ष्य छोटा है तो पुरस्कार के रूप में ‘डोपामाइन’ की छोटी खुराक ही मिलेगी; और जब हम कोई काम नहीं करेंगे, यानी विकास की दिशा में कोशिश नहीं करेंगे तो ‘डोपामाइन’ निकलेगा ही नहीं। मतलब, कुछ नहीं करने पर हमें कोई जीव-वैज्ञानिक प्रोत्साहन नहीं मिलेगा।

सावधान! हमारा लक्ष्य वास्तविक होना चाहिए। हम बहुत ही दृश्योन्मुख (विजुअली ओरिएंटेड) प्राणी हैं। हम अपने लक्ष्य को जितनी स्पष्टता के साथ देख पाते हैं, हमारे मस्तिष्क व तंत्रिका-तंत्र में उतनी ही अधिक मात्रा में ‘डोपामाइन’ का स्राव होता है और हम उस लक्ष्य की उपलब्धि के लिए उतने ही अधिक उत्साह से आगे बढ़ते हैं।

इस तरह, हम अच्छा भोजन करते हैं और वास्तविक व सकारात्मक विकास की दिशा में आगे बढ़ते जाते हैं, लेकिन जब लक्ष्य अस्पष्ट होता है तो 'डोपामाइन' नशे की लत जैसा नकारात्मक प्रभाव भी पैदा करता है। फिर हम विकास की दिशा में नहीं, बल्कि विनाश की दिशा में बढ़ने में भी खुद को उत्साहित महसूस करने लगते हैं। ध्यान रहे कि कोकीन, निकोटीन, शराब व जुआ भी 'डोपामाइन' पैदा करते हैं और उनका अनुभव बहुत ही नशीला व लत पैदा करनेवाला होता है। फिर हम और भी ज्यादा नकारात्मक कार्यों के लिए उत्साहित होते जाते हैं और उन सभी कार्यों में भी हमें व्यक्तिगत तौर पर अच्छा ही महसूस होता है। यह सब 'डोपामाइन' का ही खेल होता है। हम ज्यों-ज्यों इन 'नकारात्मक उपलब्धियों' को हासिल करते जाते हैं, हमें 'डोपामाइन' की लगातार बड़ी खुराक मिलती रहती है और हम ज्यादा 'खतरनाक विकास' की दिशा में आगे बढ़ते जाते हैं।

हाँ, इस सूची में एक चीज और भी है, जिसने हाल के समय में हमारे शरीर की 'डोपामाइन पुरस्कार प्रणाली' पर डाका डालना शुरू कर दिया है और वह है—सामाजिक संजालीकरण (सोशल नेटवर्किंग)। हम फेसबुक पर 'लाइक', ट्विटर, इंस्टाग्राम आदि पाठ संदेशों आदि के पीछे दीवाने-से हो गए हैं। हम जानते हैं कि इन गतिविधियों से हम यूँ ही अपना समय बरबाद कर रहे हैं, फिर भी हम इसके बिना रहना नहीं चाहते। हममें से बहुत से लोगों ने सामाजिक संजालीकरण गतिविधियों को अपना मानसिक हिस्सा ही बना लिया है और हर समय अपने स्मार्ट फोन को अपने हाथ में लिये रहते हैं, ताकि कोई जरूरी संवाद पढ़ने में देर न हो जाए। इतना ही नहीं, जब हम सुबह सोकर उठते हैं तो मुँह-हाथ धोने या चाय पीने से भी पहले अपना स्मार्ट फोन देखते हैं कि कहीं कोई जरूरी ई-मेल या कोई संवाद तो नहीं आ गया! इसका मतलब यही है कि हम सामाजिक संजालीकरण जनसंचार माध्यम यानी सोशल मीडिया के नशेड़ी हो चुके हैं और यह सब 'डोपामाइन' का ही कमाल है।

इतना ही नहीं, प्रदर्शन-प्रेरित (परफॉर्मेंस ड्रिवेन) संगठनों ने अपने कर्मचारियों को 'डोपामाइन पुरस्कार प्रणाली' के जरिए लगभग पागल-सा बना रखा है। संगठनों के कर्मचारियों में लक्ष्य हासिल करने की मानो होड़ सी मची रहती है। क्योंकि उनके सामने 'डोपामाइन' की आकर्षक खुराक पेश की जाती है—लक्ष्य हासिल करो, पैसा बटोरो! बिल्कुल जुआ की तरह, अधिकांश पेशेवर 'अंकों' के पीछे भागते रहते हैं। अब सवाल यह है कि क्या हमारे ये आधुनिक व्यसन निर्दोष हैं या इनके अनचाहे दुष्प्रभाव भी हैं, जो हमें नुकसान पहुँचा रहे हैं? इसके अलावा, यह भी 'डोपामाइन' का ही प्रभाव है कि हम आज के आधुनिक युग में खरीदारी या चीजों का संग्रह जैसे शौक भी पालने लगे हैं, जिनका कोई तर्कसंगत लाभ नजर नहीं आता। असल में, हम इस तरह के शौक में आनंद लेते हैं, क्योंकि ये हमारी पाषाणकालीन पूर्वजों से चली आई भोजन ढूँढ़ने की इच्छाओं को संतुष्ट करते हैं। यह हमें भले ही अच्छा लगे, लेकिन यदि हम इन गतिविधियों को नियंत्रित नहीं रख पा रहे हैं, तो तय मानिए कि आप डोपामाइन व्यसन के शिकार बन चुके हैं।

फिलहाल अभी तक विश्लेषण से यह पता चलता है कि प्रकृति द्वारा जीव-वैज्ञानिक रूप से प्रदान किए गए दो तथाकथित 'स्वार्थी रसायन' एंडोर्फिन व डोपामाइन एक साथ मिलकर हमारे अस्तित्व की रक्षा को सुनिश्चित करते हैं। भोजन जुटाने व आश्रय का निर्माण करने में एंडोर्फिन हमारी मदद करता है, तो डोपामाइन हमें इन कामों को पूरा करने और उसे आगे भी जारी रखने के लिए उत्साहित करता है। यही कारण है कि हम अपनी नौकरी को अपने अस्तित्व की रक्षा की जरूरत बताते हैं और एंडोर्फिन हमें उकसाता है कि नौकरी के लिए लगातार प्रयास करें। फिर जब हम कुछ हासिल कर लेते हैं तो हमें 'डोपामाइन' की खुराक मिलती है और हम अपनी उपलब्धि को लगातार दोहराते जाने के लिए प्रेरित होते हैं, लेकिन सबकुछ हम अकेले ही नहीं कर सकते, विशेष रूप से कुछ बड़ी चीजें। इसके लिए हमें दूसरे से मदद लेनी पड़ती है और दूसरे को सहयोग भी करना पड़ता है। पूर्णता, खुशी व वफादारी

जैसे टिकाऊ एहसासों के लिए हमें दूसरे के साथ रिश्ते बनाने व वचनबद्ध होने की जरूरत पड़ती है। शुक्र यह है कि इस काम में मदद के लिए प्रकृति ने हमें सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन नामक दो निस्स्वार्थी रसायनों से पुरस्कृत किया है, वरना हम मनुष्य भी मनुष्य जैसे न होकर खूँखार जानवरों जैसे निर्मम हो जाते।

...फिर तो हम मनुष्य ही नहीं होते!

सरीसृप (रेप्टाइल), मछली (फिश) व उभयचर (एम्फिबियन) वर्ग के ठंडे खूनवाले जानवरों (कोल्ड ब्लडेड एनिमल) में सकारात्मक भावनाएँ नहीं होतीं, क्योंकि वे न दूसरों से मदद लेते हैं और न ही दूसरों को सहयोग करते हैं। यही कारण है कि प्रकृति ने उन्हें सहयोग की पुरस्कार योजना से भी वंचित रखा है। प्रकृति ने उनकी जीव-वैज्ञानिक संरचना ही ऐसी बनाई है कि वे बिल्कुल अकेले ही रहते हैं; वे जो भी करते हैं, अपनी सहज-प्रवृत्ति (इंस्टिंक्ट) से ही करते हैं। उनकी सहज प्रवृत्ति ही उनके काम आती है। उदाहरण के लिए, एक शिकार को देखकर जब मगरमच्छ उसकी तरफ बढ़ते हैं, तो कोई किसी की चिंता नहीं करता और वे एक-दूसरे के सहयोग से एकजुट होकर शिकार नहीं करते। वे अकेले ही आगे बढ़ते हैं, जो ज्यादा तेज व शक्तिशाली होता है, वही शिकार पर कब्जा करता है और दूसरे की चिंता किए बगैर अपना पेट भरकर अपनी दिशा में चला जाता है।

लेकिन स्तनधारी (मैमल) व पक्षी (बर्ड) वर्ग के गरम खूनवाले जानवरों (हॉट ब्लडेड एनिमल) ऐसे नहीं होते। उनमें थोड़ी-बहुत सकारात्मक भावनाएँ होती हैं। वे दूसरों से मदद भी लेते हैं और दूसरों का सहयोग भी करते हैं, लेकिन मनुष्य सहित अन्य सभी गरम खूनवाले जानवर भी अपनी सहज प्रवृत्ति से ही काम करते हैं। साथ ही, उन सभी में भी कम-अधिक मात्रा में सरीसृप वर्ग की सहज आदिम प्रवृत्तियाँ मौजूद हैं। चूँकि, मनुष्य गरम खूनवाला सबसे विकसित जानवर है, इसीलिए उसमें सहज आदिम खूँखार प्रवृत्तियाँ सबसे कम रह गई हैं। यही कारण है कि तमाम स्वार्थी प्रवृत्तियों के बावजूद मनुष्य ठंडे खूनवाले जानवरों की तरह न तो निर्मम हो सकता है और न ही बिल्कुल अकेले जी सकता है। असल में, मनुष्य के मस्तिष्क में गरम खूनवाले स्तनधारियों की सहज प्रवृत्तियाँ अधिक हैं, जो उसे सबसे अधिक कार्यशील जानवर बनाती हैं।

लेकिन मनुष्य की व्यापक कार्यशीलता भी बेवजह नहीं है। यह मनुष्य समूह में रहना व एक-दूसरे के साथ रहना नहीं सीखा होता तो वह कब का मिट गया होता! मनुष्य की त्वचा अन्य जानवरों की तरह मोटी व परतदार नहीं है कि वह दूसरे जानवरों का आक्रमण झेल सके। मनुष्य के पास अन्य खूँखार जानवरों की तरह नुकीले व मजबूत दाँत भी नहीं हैं कि वह दूसरों को काटकर अपना बचाव कर सके! साफ है कि हम मनुष्य प्रजाति के जानवर शारीरिक रूप से उतने मजबूत थे ही नहीं कि अकेले जीवित रह पाते और अपनी संतति का विकास कर पाते। चाहे हम इस तथ्य को नजरअंदाज करने की कोशिश करें, लेकिन हकीकत तो यही है कि हमें एक-दूसरे की जरूरत है और हमें अपनी इसी जरूरत को पूरा करने के लिए प्रकृति ने सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन नामक दो निस्स्वार्थी रसायनों से पुरस्कृत किया है, वरना हम मनुष्य के रूप में विकसित ही नहीं हो पाते। फिर हमारी भी स्थिति खूँखार जानवरों जैसी ही होती और हम एक-दूसरे के साथ निर्मम व्यवहार करते होते!

हमारे मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र में मौजूद सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन ही वे रसायन हैं, जो हमें समाज-समर्थक व्यवहार के लिए उत्साहित करते हैं। ये रसायन हमें एक-दूसरे के साथ विश्वास व मित्रतापूर्ण संबंध बनाने में मदद करते हैं, ताकि हम अपने समूह या समुदाय की देखभाल व रक्षा कर सकें। इन्हीं दो रसायनों की बदौलत ही समाज व सभ्यताओं का विकास संभव हो सका है और ये ही वे रसायन हैं, जिनके कारण हम बड़ी उपलब्धियों को हासिल करने के लिए एक-दूसरे को साथ लेकर एकजुट सामूहिक प्रयास करते हैं। तो, यह हमारे अस्तित्व व विकास की जरूरत भी है और हमारी रासायनिक मजबूरी भी कि हम एक-दूसरे की मदद करें और एक-दूसरे का

सहयोग हासिल करें। यही तो सामूहिक-सामुदायिक-सामाजिक कार्य-भावना है।

जब हम एक-दूसरे का सहयोग या देखभाल करते हैं, तो हमारे मस्तिष्क व तंत्रिका तंत्र में सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन का स्राव होता है, जो हमें सुरक्षा, परिपूर्णता, अपनापन, विश्वास व सौहार्द की भावनाओं का अनुभव कराते हैं। ये ही वे रसायन हैं, जो हमें एक-दूसरे की प्रति ऐसी सहानुभूति से भर देते हैं कि हम एक-दूसरे के लिए अपनी जान भी जोखिम में डाल देने से नहीं घबराते और हम ऐसा इसीलिए कर पाते हैं कि हमें पता होता है कि दूसरे भी हमारे साथ वैसा ही करने से नहीं चूकेंगे। इस तरह, जब हम खुद को सामूहिक सुरक्षा-चक्र के भीतर पाते हैं, तो तनाव कम हो जाता है, परिपूर्णता की भावना ऊँची हो जाती है, दूसरों की मदद व सहयोग करने की चाहत तीव्र हो जाती है और अपनी सुरक्षा के लिए दूसरों पर भरोसा करने की इच्छा सातवें आसमान पर पहुँच जाती है और जो नेतृत्वकर्ता अपने कार्यस्थल में यह वातावरण कायम करने में सफल होता है, वह कर्मचारियों का प्रेरणास्रोत बन जाता है और उनसे बड़े-बड़े काम करवाने से सफल होता है, लेकिन जब हमें इन सामाजिक प्रोत्साहनों से वंचित रखा जाता है, तो हम ज्यादा स्वार्थी व ज्यादा आक्रामक हो जाते हैं, नेतृत्वकर्ता का प्रभाव खत्म हो जाता है और वह अपने लोगों से छोटे-से-छोटा काम भी करवा पाने में अक्षम साबित होता है।

असल में, सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन हमारे सामाजिक-यंत्र (सोशल मशीन) में चिकनाई (ग्रीज) का काम करते हैं और जब इन रसायनों की मात्रा घटती है, सामाजिक-यंत्र के कल-पुर्जे घिसने लगे हैं। साफ है कि जब नेतृत्वकर्ता अपने कार्यस्थल में असुरक्षा का माहौल बनाते हैं, वहाँ पर कार्यरत कर्मचारियों में सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन रसायनों का स्राव नहीं होता है। फिर कर्मचारियों की सामूहिक कार्य-भावना नष्ट हो जाती है; अस्वस्थ प्रतिद्वंद्विता को फलने-फूलने का मौका मिलता है; कार्यस्थल आपसी संघर्ष का अखाड़ा बन जाता है और फिर कर्मचारियों के साथ-साथ नेतृत्वकर्ता व संगठन का भविष्य भी चौपट हो जाने की दिशा में तेजी से बढ़ने लगता है।

ध्यान रहे कि किसी संगठन की कार्य-संस्कृति ही उसकी सबसे बड़ी ताकत होती है, न कि उसका आकार या संसाधन; और इसी ताकत के दम पर ही संगठन समय की जरूरतों के मुताबिक खुद को ढाल पाता है, विपरीत परिस्थितियों को काबू करता है और नए नवाचारों का अग्रदूत बन पाता है। जब कार्य-परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं, जब कार्यस्थल में मजबूत सुरक्षा-चक्र कायम रहता है और सभी उसके अंदर खुद को सुरक्षित महसूस कर पाते हैं, तभी कर्मचारी अपना अधिकतम कार्य-प्रदर्शन कर पाते हैं। जी हाँ, मनुष्य वही कर पाता है, जिसके लिए उसकी जीव-वैज्ञानिक संरचना की गई है। यदि नेतृत्वकर्ता अपने मातहत कर्मचारियों के साथ मनुष्य जैसा व्यवहार करता है, तो वह अपनी स्वाभाविक संरचना के मुताबिक कार्य कर पाता है; यानी सेरोटोनिन व ऑक्सीटोसिन के पुरस्कार की बदौलत एक-दूसरे को एकजुट कर आश्चर्यजनक परिणाम देता है।

आखिर दूसरों के लिए क्यों मरते हैं हम?

सामाजिक प्राणी होने के नाते हम अपने समुदाय के लोगों के अनुमोदन से भी ज्यादा कुछ चाहते हैं और हमें इसकी आवश्यकता भी होती है। जब हम अपने समूह में अन्य लोगों के लिए या फिर अपने पूरे समूह के लिए कुछ अच्छा करते हैं, तो हम उन प्रयासों के लिए खुद मूल्यवान् भी महसूस करना चाहते हैं। यदि हम इस भावना को अकेले ही महसूस कर पाते तो हमें पुरस्कार समारोहों, कर्मचारी मान्यता कार्यक्रमों, प्रमाण-पत्र वितरण समारोहों आदि की जरूरत ही न होती और फिर, फेसबुक पर पसंद (लाइक) करनेवालों की संख्या, यू-ट्यूब पर दर्शकों की संख्या व ट्विटर पर अनुयायियों की संख्या व उनके नामों को प्रदर्शित करने की भी जरूरत नहीं पड़ती। असल में हम महसूस करना चाहते हैं कि हम व हमारे द्वारा किए गए काम को दूसरे लोगों का, विशेष रूप से अपने समूह के लोगों का महत्त्व मिले।

और यह सब हमारे रक्त बिंबाणु (ब्लड प्लेटलेट्स) व रक्तोद (सीरम) में मौजूद सेरोटोनिन नामक रासायनिक यौगिक के कारण होता है। यह हमारी रक्त वाहिकाओं (ब्लड वेसल्स) में संकुचन पैदा करता है और तंत्रिका संचारक (न्यूरोट्रांसमीटर) के रूप में कार्य करता है। जब कोई छात्र मंच पर खड़े होकर अपना प्रमाण-पत्र ग्रहण करता है, जब खिलाड़ी अपना पुरस्कार ग्रहण करता है, जब किसी कलाकार, समाजसेवी, वैज्ञानिक को सम्मानित किया जाता है, तब उनकी नसों में सेरोटोनिन तेजी से दौड़ने लगता है और वे स्वयं व स्वयं के कार्य पर गर्व (प्राउड) का अनुभव करते हैं। उन सभी के चेहरों पर गर्व के उस भाव को भी आसानी से पढ़ा भी जा सकता है। यदि हम उन लोगों के नजदीकी हैं और समारोह में मौजूद हैं, तो हमारे शरीर में भी सेरोटोनिन का प्रवाह बढ़ जाता है और हम भी गर्व महसूस करने लगते हैं। क्यों? क्योंकि यह सेरोटोनिन ही है, जो माता-पिता व बच्चों, शिक्षक व छात्रों व प्रशिक्षक व खिलाड़ियों, अधिकारी, कर्मचारियों के बीच में बंधन को मजबूत बनाता है।

ध्यान दीजिए, जब कोई पुरस्कार ग्रहण करता है तो वह सबसे पहले किन लोगों को धन्यवाद देता है? उन लोगों की, जिनकी मदद, सहयोग व सुरक्षा के बिना उसके लिए वह उपलब्धि हासिल कर पाना संभव न हुआ होता। वे उसके माता-पिता या प्रशिक्षक या अधिकारी या भगवान् भी हो सकते हैं और जब सेरोटोनिन के कारण दूसरे लोग हमें मदद, सहयोग व सुरक्षा प्रदान करते हैं, तो हम उनके प्रति उत्तरदायित्व की भावना भी महसूस करते हैं। तो सेरोटोनिन हमारी भावनाओं को नियंत्रित करता है। जब दूसरे हमारी मदद के लिए अपना समय व ऊर्जा लगाते हैं, तो हम उनके प्रति उत्तरदायित्व का भार महसूस करते हैं। इसीलिए हम उनका आभार प्रकट करते हैं और जताते हैं कि उन्होंने जो बलिदान दिया था, उनका भी मूल्य है। हम उन्हें कभी भी नीचा नहीं दिखाते, बल्कि उन्हें गौरव प्रदान करते हैं और जब हम दूसरों की मदद करते हैं, तब भी हम बराबर उत्तरदायित्व का भार महसूस करते हैं। हम चाहते हैं कि दूसरे लोग भी सही कदम बढ़ाएँ, ताकि वे जो करना चाहते हैं, वे उसे पूरा कर सकें।

यह सेरोटोनिन के असर का नतीजा है कि हम अंकों के प्रति नहीं, बल्कि लोगों के प्रति उत्तरदायित्व की भावना महसूस करते हैं। यही कारण है कि धावक दर्शकों की अनुपस्थिति में मील-रेखाओं को पार करता हुआ, वैसा नहीं महसूस करता, जैसा कि वह फीता को तोड़ते हुआ महसूस करता है, जब दर्शक तालियाँ बजाते हुए जयकारा लगा रहे होते हैं। ध्यान देने की बात है कि दोनों ही स्थितियों में, चाहे वह मील-रेखाओं को पार करे या फिर फीता को तोड़े, धावक की उपलब्धि एक जैसी होती है, एक जैसा समय लगता है और बहुत हद तक एक जैसी ही कोशिश भी करनी पड़ती है। अंतर सिर्फ इतना है कि मील-रेखाओं को पार करता हुआ धावक सिर्फ अंकों की उपलब्धियाँ हासिल कर रहा होता है, जबकि फीता तोड़ते समय उसकी उपलब्धि की गवाही के लिए वाह-वाही करते हुए लोग मौजूद होते हैं। तो, धावक एक के बाद दूसरी मील-रेखा को पार करता हुआ अंतिम लक्ष्य की ओर इसलिए भी लगातार दौड़ता चला जाता है कि उसे पता होता है कि वहाँ पर उसके नजदीकी व प्रशंसक उसका इंतजार कर रहे हैं। वह धावक बखूबी जानता है कि उसके नजदीकी व प्रशंसक उसकी उपलब्धि की एक झलक पाने के लिए, उसकी खुशी के मौके पर मौजूद रहने के लिए व उसे अपने काम में उत्साहित बनाए रखने के लिए ही अपना कितना समय, धन व ऊर्जा खर्च कर वहाँ मौजूद हुए हैं। साथ ही, वे नजदीकी व प्रशंसक भी उस धावक के लिए इतना कुछ इसलिए कर रहे होते हैं कि उन्हें भी उस धावक की उपलब्धि में अपनी उपलब्धि नजर आती है और यह सब सेरोटोनिन के कारण होता है।

साफ है कि हम दूसरों को सफल बनाने के लिए जितना अधिक योगदान करते हैं, अपने समूह में हमारी कीमत भी उतनी ही बढ़ जाती है और उनके द्वारा हमें ज्यादा सम्मान मिलता है। जब हम ज्यादा आदर व मान्यता प्राप्त करते हैं तो समूह में हमारी हैसियत भी बढ़ती है और हमारी हैसियत जितनी बढ़ती है, सेरोटोनिन की उतनी ही बढ़ी

खुराक हमारे रक्त संचार को बढ़ा देती है।¹ और हम पहले से भी ज्यादा उत्साह के साथ दूसरों को सफल बनाने की कोशिशों में जुट जाते हैं। जी हाँ, प्रकृति ने हमारी जीव-वैज्ञानिक संरचना ही इस प्रकार से की है कि हम दूसरों की सफलता में योगदान करें और गौरव व मान-सम्मान हासिल करें।

चाहे हम माता-पिता हों या शिक्षक, प्रशिक्षक या अधिकारी, हम सभी के रक्त बिंबाणु व रक्तोद में मौजूद सेरोटोनिन हमें उनके लिए काम करने के लिए उत्साहित करता है, जिनके लिए हम सीधे तौर पर उत्तरदायी होते हैं और यदि हम संतान हैं, या छात्र या खिलाड़ी या कर्मचारी, हम सभी में मौजूद सेरोटोनिन हमें उन्हें गौरवान्वित महसूस कराने लिए, कठिन परिश्रम करने के लिए उत्साहित करता है, जिनके द्वारा हमारी देखभाल की जा रही होती है। तो किसी समूह में जो व्यक्ति दूसरों की सफलता के लिए सबसे अधिक करता है, उसी को वह समूह अपना नेतृत्वकर्ता स्वीकार करता है। जी हाँ, सेरोटोनिन हमारे सामाजिक लेन-देन की सहज व्यावहारिक प्रक्रिया को संचालित करता है।

...फिर जीने की इच्छा ही क्यों होती?

मनुष्य प्रजाति का सबसे पसंदीदा रसायन है—ऑक्सीटोसिन। यह मस्तिष्क के आधार से जुड़ी मटर के आकार की पीयूषिका ग्रंथि (पिट्यूटरी ग्लैंड) द्वारा स्राव किया जानेवाला नियामक रसायन (हार्मोन) है। इसका जीव-वैज्ञानिक कार्य प्रसव के दौरान गर्भाशय संकुचन को बढ़ाना और स्तनों की नलिकाओं में दूध के उत्सर्जन को उत्तेजित करना है, लेकिन इस रसायन का मनोवैज्ञानिक कार्य है—हमारी मित्रता, प्रेम व गहरा विश्वास पैदा करना। यह भावना तब पैदा होती है, जब हम अपने सबसे नजदीकी मित्रों या विश्वासी सहकर्मियों के साथ होते हैं। यही भावना तब भी महसूस होती है, जब हम दूसरों के लिए कुछ अच्छा करते हैं या फिर दूसरे हमारे लिए कुछ अच्छा करते हैं, लेकिन प्रकृति ने ऑक्सीटोसिन का पुरस्कार सिर्फ हमें खुश रहने के लिए ही नहीं दिया है। यही हमारी अपने अस्तित्व की रक्षा करने की सहज प्रवृत्ति का सबसे महत्वपूर्ण कारण है।

बिना ऑक्सीटोसिन के हममें उदारता की भावना ही नहीं पैदा होती; हम दूसरों के लिए कोई भी काम करने को इच्छुक ही नहीं हो पाते; और दूसरों के लिए हममें सहानुभूति भी नहीं होती। फिर हम दूसरों के साथ मित्रता का मजबूत बंधन कैसे विकसित कर पाते और दूसरों के प्रति इतना गहरा विश्वास कैसे कर पाते कि वह हमारी सुरक्षा करेगा? और, यदि हम यह सब नहीं कर पाते तो फिर अपनी संतति को आगे बढ़ाने के लिए कोई साथी ही नहीं ढूँढ़ पाते। जी हाँ, यह ऑक्सीटोसिन का ही कमाल है कि हम अपना जीवनसाथी चुन पाते हैं, उससे अटूट प्यार कर पाते हैं और फिर इतना अटूट विश्वास भी कर पाते हैं कि अपनी संतति को आगे बढ़ाने की पूरी जिम्मेदारी ही उसी को सौंप देते हैं। इतना ही नहीं, ऑक्सीटोसिन के कारण ही हम दूसरों पर भरोसा कर अपने कारोबार का निर्माण व विकास कर पाते हैं। यदि प्रकृति ने हमें ऑक्सीटोसिन का वरदान न दिया होता तो हम किसी प्रकार का कोई भी मानवीय संबंध ही नहीं बना पाते और सामाजिक प्राणी होने का अद्भुत सौभाग्य भी हमें प्राप्त नहीं हो पाता!

यह तो साबित हो चुका है कि मानव प्रजाति तभी कुछ बड़ा हासिल कर सकती है, जब वह समूह में कार्य करे और इसके लिए दूसरों पर भरोसा करना भी बेहद जरूरी होता है, लेकिन रोचक तथ्य यह भी है कि दूसरों पर भरोसा करने के लिए हमें सहज ज्ञान भी तो होना चाहिए। एक समूह में किसी भी व्यक्ति को, यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे सुरक्षित हैं, निरंतर सतर्कता बनाए रखने की जरूरत नहीं होती है। यदि हम ऐसे लोगों के बीच, जिन पर हम भरोसा करते हैं और जो हम पर भरोसा करते हैं, तो सुरक्षा सुनिश्चित करने का उत्तरदायित्व किसी एक व्यक्ति पर नहीं, बल्कि समूचे समूह पर होता है। हम निश्चित होकर कब सो सकते हैं? जब हमें भरोसा होता है कि

हमारी सुरक्षा के लिए कोई और जगा हुआ है। तो, ऑक्सीटोसिन क्या करता है? जी हाँ, यही वह रसायन है, जो सीधे तौर पर हमारी मदद करता है कि हम किस हद तक अपने आपको कमजोर बनाना बरदाश्त कर सकते हैं। हम ऑक्सीटोसिन को 'सामाजिक दिशासूचक' (सोशल कंपास) भी कह सकते हैं। यह हमारे सहज ज्ञान को दिशा दिखाता है कि हम दूसरे से खुलकर कितना सुरक्षित रह सकते हैं और कब हमें खुद को अपनी ही खोल में बंद रखना चाहिए।

ध्यान रहे कि स्वार्थी रसायन डोपामाइन हमें त्वरित व तात्कालिक संतुष्टि देता है, लेकिन ऑक्सीटोसिन दीर्घकालीन संतुष्टि प्रदान करता है। हम किसी के साथ जितना अधिक समय गुजारते हैं, उस पर हमारी निर्भरता उतनी ही बढ़ती जाती है, यानी हम खुद को शारीरिक व मानसिक रूप से उतना ही कमजोर बनाते जाते हैं। क्योंकि हम उस पर भरोसा करना सीख जाते हैं और बदले में उसका भरोसा भी हासिल कर लेते हैं और एक-दूसरे पर हमारी निर्भरता जितनी बढ़ती है, दोनों ही व्यक्ति-विशेषों में ऑक्सीटोसिन का स्त्राव उतना ही तेज होता है। यह जादू जैसा असर करता है। एक साथ रहते-रहते दो लोग एक-दूसरे पर परस्पर इतना भरोसा करने लगते हैं और एक-दूसरे का इतना भरोसा हासिल करने लगते हैं कि उनके बीच में गहरा बंधन कायम हो जाता है। ऑक्सीटोसिन की लगातार बड़ी खुराक मिलने से दो व्यक्तियों के बीच जो पागलपन, उत्साह व स्वाभाविकता का बंधन कायम होता है, वह ज्यादा आरामदेह, ज्यादा टिकाऊ, ज्यादा स्थायी बंधन होता है।

यही नियम तो कार्यस्थल में भी लागू होता है। जब हम नई नौकरी पर जाते हैं तो हम भी बहुत उत्साहित होते हैं; समूह में काम करनेवाले दूसरे लोग भी उत्साहित दिखते हैं; और सबकुछ बिल्कुल ठीक-ठाक लगता है, लेकिन यह तात्कालिक उत्साह काफी नहीं है। दूसरों पर भरोसा करने के लिए और दूसरों का भरोसा जीतने के लिए काफी श्रम ऊर्जा की जरूरत होती है। फिर, हम दूसरों पर इतना भरोसा कर पाते हैं कि वह हमारी सुरक्षा करेगा और आगे बढ़ने में मदद करेगा! अंत में, हम खुद को किसी कार्य-समूह का अभिन्न हिस्सा मान पाते हैं। तो चाहे वह व्यक्तिगत संबंध हो या पेशेवर, आपसी संबंध कायम करने का नियम एक ही होता है और ऑक्सीटोसिन दोनों ही मामलों में ईमानदारी से काम करता है। जरा सोचिए, यदि यह रसायन नहीं होता तो हममें जीने की स्वाभाविक इच्छा भी होती?

यही तो है, सामाजिक या सामूहिक कार्य का रसायन-शास्त्र। जब तक हम मानव रसायन-शास्त्र की स्वाभाविकता को नहीं समझते हैं और सहज मानवीय संबंध नहीं बनाते हैं, तब तक हम न तो पारिवारिक कार्य-भावना का विकास कर सकते हैं और न ही सामाजिक या सामूहिक कार्य-भावना का। तो हमारी व्यक्तिगत सफलता का रहस्य सामूहिक कार्य के रसायन-शास्त्र में ही छुपा हुआ है, कहीं और नहीं।

□□□